आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 11 ★ मूल्य : 10 रु.
10 नवम्बर, 2009 ★ मार्गशीर्ष 2066

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

नमस्कार महामंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्वसाहूणं ॥
एसो पंच णमोक्कारो,
सव्व-पावप्पणासणो,
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलं ।

मंगल-मूल, धर्म की जननी,
शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी,
महिमामयी यह 'जिनवाणी'।।

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

पीयें धोवन पानी, बोले मीठी वाणी यही कहे जिनवाणी ।

स्वाध्याय चित्त की स्थिरता व पवित्रता का सर्वोत्तम उपाय है।
– आचार्य श्री हस्ती

।। वन्दे धेनु मातरम् ।।

भारतीय नस्ल की गायों का आयुर्वेदिक (बिलोनी) पद्धति से निर्मित १००% शुद्ध आरोग्यदायी घी!

कल्याणी
गाय का शुद्ध घी

- २७ लिटर दूध से बनता है यह १ किलो घी।
- इसे आप ६ महिने तक खा सकते है।
- दवाइयों में यह जितना पुराना उतना लाभप्रद होता है।

मुंबई : गाय का पित्तनाशक घी विटामिन 'ए' से युक्त होते हुए, इसके सेवन से चर्बी नहीं बढती, साथ ही यह पेट के लिये गुणकारी है और पौरूषत्व भी बढता है।

किन्तु वर्तमान युग में गाय का शुद्ध घी दुर्लभ हुआ है। तथापि जलगाँव के आर.सी. बाफना ट्रस्ट की गोशाला निर्मित गाय का घी शुद्ध एवं गुणवत्तापूर्ण है।

डॉ. प्रकाश कोठारी

संदर्भ : मिड डे, मुंबई.

आयुर्वेदिक पद्धति से निर्मित 100% शुद्ध आरोग्यदायी घी!

अहिंसा तीर्थ

रतनलाल सी. बाफना गो-सेवा अनुसंधान केंद्र

कुसुंबा, अजंता रोड, जलगाँव फोन : ०२५७- २२७०१२५, सुविधा केंद्र : २२२०२१२

www.ahimsatirth.com

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

卐 संरक्षक

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

卐 संस्थापक

श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

卐 प्रकाशक

प्रेमचन्द जैन, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,

जयपुर-302003(राज.)

फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-2570753

卐 सम्पादक

प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन

3 K 24-25, कुड़ी भगतासनी हाउसिंग बोर्ड

जोधपुर-342005 (राज.), फोन-0291-2730081

E-mail : jinvani@yahoo.co.in

卐 सह-सम्पादक

नौरतन मेहता, जोधपुर

डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

卐 भारत सरकार द्वारा प्रदत्त

रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57

डाक पंजीयन सं.-RJ/JPC/M-07/2009-11

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

बालाणं अकामं तु,
मरणं असइं भवे।
पंडियाणं सकामं तु,
उक्कोसेण सइं भवे।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 5.3

होता मरण अकाम बाल,
जीवों का बारम्बार जहाँ।
प्राज्ञव्रती का एक बार,
होता सकाम है मरण यहाँ।।

नवम्बर, 2009
वीर निर्वाण संवत्, 2536
मार्गशीर्ष, 2066

वर्ष 66 अंक 11

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 120 रु.	स्तम्भ सदस्यता : 11000/-
आजीवन देश में : 500 रु.	संरक्षक सदस्यता : 5000/-
आजीवन विदेश में : 5000 रु.	साहित्य आजीवन सदस्यता- 3000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क भेजने का पता- जिनवाणी, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-03 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, 2571163, फैक्स : 0141-2570753, E-mail: jinvani@yahoo.co.in
ड्राफ्ट 'जिनवाणी' जयपुर के नाम बनवाकर उपर्युक्त पते पर प्रेषित किया जा सकता है।

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो

विषयानुक्रम

सम्पादकीय -	दृष्टिसम्पन्न आचार्य हस्ती	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-संकलित	10
	विचार-वारिधि	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.	11
प्रवचन-	दुनियाँ दुःखकारी	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.	12
जीवन व्यवहार -	धर्म-तीर्थ के चारों अंग परस्पर पूरक हैं	-श्री उदयमुनि जी म.सा.	19
शोधालेख -	भारतीय तंत्र साधना और जैन धर्म-दर्शन(4)	-प्रो. सागरमल जैन	25
	मानव-अधिकार के परिप्रेक्ष्य में जैन दर्शन एवं भारतीय संविधान	-डॉ. चन्दनबाला	30
चिन्तन-	क्या जैन समाज परिग्रही है?	- डॉ. दयानन्द भार्गव	35
तत्त्व ज्ञान-	दशवैकालिक सूत्र से पाएँ तात्त्विक बोध(4)	-संकलित	40
	आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ (52)	-श्री धर्मचन्द जैन	44
अंग्रेजी-स्तम्भ-	Transgressions of the twelve vratas	*-Dr. Priyadarshana Jain*	48
संस्मरण-	अचित्त पानी का स्थानक	- डॉ. दिलीप धींग	54
धारावाहिक-	धरोहर (1)	-श्रीमती पारसकंवर भंडारी	55
नारी-स्तम्भ-	स्वार्थ से परमार्थ की ओर	-श्रीमती विमला जोटा	58
युवा-स्तम्भ-	कठिन नहीं प्रतिक्रमण का कंठस्थीकरण	-श्री नवनीत मेहता	62
बाल-स्तम्भ -	ढंढण मुनि	-मुनि सुखलाल	65
उपन्यास-	सुबह की धूप (9)	-श्री गणेशमुनि जी शास्त्री	68
स्वास्थ्य-विज्ञान-	सुजोक एक्यूप्रेशर	- डॉ. चंचलमल चोरडिया	73
विचार-	प्रार्थना का महत्त्व	-श्रीमती कमला सिंघवी	18
	स्वाति-बूँद	-श्रीमती कंचन सुराणा	39
	Present is a gift	*-Minakshi Jain*	64
कविता/गीत-	महावीर के संदेशों को घर-घर में पहुँचाइये	-श्री मोहन कोठारी	24
	क्षणिकाएँ	-यश	29
	चेतन की अन्तर्यात्रा	-डॉ. रमेश मयंक	47
हस्ती-शताब्दी-	आचार्य हस्ती जन्म-शताब्दी		78
साहित्य समीक्षा-	नूतन साहित्य		87
रिपोर्ताज-	ब्यावर वर्षावास का योग	-श्री सम्पतराज चौधरी, श्रीमती मंजू भण्डारी	88
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन		95
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार		114

सम्पादकीय

दृष्टिसम्पन्न आचार्य हस्ती

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

नमन उनको कोटि-कोटि, जो अध्यात्म पथ के देवता।
सन्त सच्चे सरल ऊँचे, आचार जिनकी सम्पदा॥

पौष शुक्ला चतुर्दशी 30 दिसम्बर 2009 से अध्यात्मयोगी, युगशास्ता, प्रज्ञापुरुष, करुणानिधान, आचारनिष्ठ, दूरदर्शी, वचनसिद्ध, आत्मबली, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक, इतिहास निर्माता आचार्य श्री हस्तीमल जी महाराज की जन्म-शताब्दी प्रारम्भ हो रही है। इसे अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ द्वारा 'आचार्य हस्ती शताब्दी समिति' के माध्यम से ज्ञानाराधन, तपाराधन, व्रताराधन एवं अनेक नये शुभ संकल्पों के साथ पौष शुक्ला चतुर्दशी विक्रम संवत् 2067 दिनांक 18 जनवरी 2011 तक सोत्साह मनाने का उपक्रम प्रारम्भ कर दिया गया है। इस सौवें वर्ष को 'अध्यात्म-चेतना वर्ष' नाम दिया गया है।

श्रमण भगवान् महावीर के शासन में तथा स्थानकवासी जैन परम्परा में आचार्य हस्ती एक ऐसे संत-महापुरुष हुए जो स्वयं प्रकाशमान होने के साथ मानव-मात्र को ज्ञानप्रकाश से आलोकित देखना चाहते थे। उनकी मान्यता थी कि जब तक व्यक्ति स्वयं अपने अज्ञान-अंधकार को दूर करने में प्रवृत्त नहीं होगा, तब तक उसे जीवन के प्रति सही दृष्टि प्राप्त नहीं हो सकती। उन्होंने शिक्षा एवं स्वाध्याय को इसका साधन बताया तथा सहस्रों नर-नारियों को नियमित सत्साहित्य के स्वाध्याय हेतु संकल्प-बद्ध किया। वे अन्धभक्तों की जमात खड़ी करने में विश्वास नहीं रखते थे, अपितु उनकी चेतना को ज्ञान के प्रकाश के साथ आध्यात्मिक उन्नयन की ओर ले जाने में विश्वास रखते थे। अंधी मान्यताओं एवं भ्रान्तिमूलक रूढ़ियों को वे ज्ञान के प्रकाश द्वारा उच्छिन्न करने में सतत सन्नद्ध रहे। आत्मदीप प्रज्वलित होने पर अनेक मानसिक एवं उनसे उत्पन्न सांसारिक समस्याएँ स्वतः निर्मूल हो जाती हैं तथा व्यक्ति अपना विकास करने में स्वावलम्बी बन जाता है। इसलिए उन्होंने स्वाध्याय का ऐसा सशक्त सम्बल दिया जो व्यक्ति की आत्म-चेतना को थोथे सांसारिक प्रलोभनों से मुक्त कर सम्यक् मार्ग का अनुसरण करने में

समर्थ बना सके।

स्वाध्याय की प्रवृत्ति के विकास के लिए उन्होंने यह भी चिन्तन किया कि सत्साहित्य के साथ आगमों का अध्ययन कर सन्त-सती एवं श्रावक-श्राविका ज्ञानवर्द्धन करें। यद्यपि श्वेताम्बर परम्परा में कुत्रचित गृहस्थों द्वारा आगमों का अध्ययन निषिद्ध है, किन्तु आचार्यप्रवर ने सबके जीवन-निर्माण में उपयोगी आगम-साहित्य को सर्वजन सुलभ बनाने की दृष्टि दी एवं उत्तराध्ययन सूत्र, दशवैकालिक सूत्र सृदश आगमों का हिन्दी अर्थ, भावार्थ, कथा एवं पद्यानुवाद के साथ प्रस्तुति को उपयुक्त समझा। आमजन आगम-ज्ञान से लाभान्वित होकर अपनी चेतना का ऊर्ध्वारोहण कर सके, इस भावना से 'सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल' नामक संस्था अस्तित्व में आयी एवं आगम तथा अन्य उपयोगी साहित्य का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। इससे स्वाध्याय की प्रवृत्ति को बल मिला। यही कारण है कि आचार्य हस्ती के उपासक समूह में आज अनेक अच्छे स्वाध्यायी हैं जो आगम एवं जैन-दर्शन की गहरी जानकारी रखते हैं। उनके विचार भी अपेक्षाकृत उदार एवं सुलझे हुए हैं। संकीर्ण भावनाओं से परे रहकर आगम के हार्द को समझना एवं उसको जीवन में अपनाना उनका लक्ष्य रहता है।

स्वाध्याय के साथ सामायिक का अभियान आचार्य श्री की गहरी सूझबूझ का परिचायक था। मानव के चित्त को विषमता के दावानल से समता के समुद्र में किस प्रकार अवगाहित किया जाय, इसके लिए आपने सामायिक की प्रेरणा की। मनःशुद्धि एवं समता के अभ्यास का यह महत्त्वपूर्ण माध्यम है। इसमें अठारह पापों का त्याग तो होता ही है, संवर की साधना भी होती है। स्वाध्याय के माध्यम से जहाँ विचारों का शोधन होता है वहाँ सामायिक से विकारों का शोधन होता है। स्वाध्याय और सामायिक मानो आचार्य श्री हस्ती के संदेश के पर्याय बन गये। इतर सम्प्रदायों ने भी आचार्य हस्ती के इस अभियान की सफलता को देखकर श्रावक-श्राविकाओं में इसे प्रचारित किया। मूर्तिपूजक सम्प्रदाय भी सामायिक और स्वाध्याय के महत्त्व को स्वीकार कर रहे हैं। दिगम्बर जैन परम्परा में इसे भिन्न प्रकार से स्थान दिया गया है। वहाँ श्रावक स्वाध्याय तो करता है, किन्तु सामायिक के अभ्यास की कोई प्रवृत्ति नहीं है।

आचार्य हस्ती आध्यात्मिक जागरण की दृष्टि से उच्चकोटि के साधक सन्त थे। वे स्वयं प्रतिदिन दोपहर 12 से 2 बजे तक, प्रत्येक गुरुवार एवं बदि दशमी को नियमित रूप से ध्यान एवं मौन की साधना करते थे। रात्रि में कब शय्या

त्यागकर ध्यान में लीन हो जाते, इसका शिष्यों को भी पूरा ध्यान नहीं होता था। उनके आध्यात्मिक भजन 'मेरे अन्तर भया प्रकाश' 'मैं हूँ उस नगरी का भूप' आदि उनकी अन्तर्दृष्टि के परिचायक हैं। देह से चेतना की भिन्नता का उन्होंने अनेक बार अनुभव किया। यही कारण है कि वे संघ के आचार्य का दायित्व निर्वाह करते हुए भी निःस्पृह, निरभिमानी एवं निर्लेप रह सके। प्राणिमात्र के प्रति मैत्री, गुणीजनों के प्रति प्रमोदभाव, दुःखीजनों के प्रति करुणाभाव एवं विपरीत वृत्ति वालों के प्रति माध्यस्थभाव उनके जीवन का अंग था। क्षमाशीलता, सरलता, निष्कपटता, असंगता एवं निर्भयता के वे निधान थे। यही कारण है कि जीवन के अन्तिम पड़ाव में भी वे तेरह दिवसीय तप-संथारा करते हुए सजग रहे। सबसे क्षमायाचना पूर्वक आत्मशुद्धि करते हुए उन्होंने संघ का दायित्व योग्य संतों (आचार्य श्री हीराचन्द्र जी एवं उपाध्याय श्री मानचन्द्र जी) को सौंपा एवं स्वयं पूर्णतः निश्चिन्त होकर समाधिभावों में 21 अप्रेल 1991 को महाप्रयाण कर गए।

आचार्यप्रवर ने एक अनूठा कार्य जैन इतिहास की व्यवस्थित प्रस्तुति का किया। 'जैन धर्म का मौलिक इतिहास' के चार भाग इसकी साक्षी हैं, जिनके हजारों पृष्ठों में तीर्थंकर परम्परा से लेकर 15-16वीं शती तक के जैन इतिहास को प्रामाणिक रीति से प्रस्तुत किया गया है। इन इतिहास ग्रन्थों को अनेक विश्वविद्यालयों में संदर्भ ग्रन्थों के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। आचार्यप्रवर ने स्वयं अनेक शोध-भण्डारों का अवलोकन किया, ताड़पत्रों, भोजपत्रों एवं कागज की पाण्डुलिपियों के माध्यम से जैन इतिहास की रिक्तता को दूर करने हेतु बीड़ा उठाया। इतिहास की जो प्रस्तुति हुई है, उसमें सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक, साहित्यिक आदि अनेक पक्ष उजागर हुए हैं, जो अतीत से प्रेरणा लेने को मजबूर करते हैं।

आपने 10 वर्ष 8 दिन की बालवय में आचार्य शोभाचन्द्र जी के मुखारविन्द से प्रव्रज्या अंगीकार की तथा 20 वर्ष की युवावय में रत्नसंघ के सप्तम पट्टधर बने। अपने 70 वर्षीय दीक्षाकाल में राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु, दिल्ली, हरियाणा, उत्तरप्रदेश आदि प्रान्तों में पद-विहार कर आपश्री ने लोगों के मनोविज्ञान को समझा एवं उनकी पात्रता के अनुसार उन्हें आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। हजारों ने धूम्रपान का त्याग किया, शराब का त्याग किया, अनेकविध व्यसनों से किनारा कर जीवन को स्वाध्याय एवं सामायिक से जोड़ा। पारस्परिक विवादों को तिलांजलि दी एवं

सौमनस्य और समरसता का अनुभव किया। सिंवाची पट्टी में 144 गाँवों में जो वैर-विरोध था, रोटी-बेटी का व्यवहार भी छूट गया था, कटुता का विष अत्यन्त तीक्ष्ण हो गया था वहाँ आचार्यप्रवर के आत्मबल, दृढ़संकल्प एवं सूझबूझ से पुनः पारस्परिक समरसता का झरना बहने लगा। आप जहाँ भी जाते वहाँ पारिवारिक एवं सामाजिक कटुता के व्यवहार को दूर कर प्रेम एवं मैत्री का संचार करना अपने संत-जीवन का एक लक्ष्य समझते थे।

आपने अनुभव किया कि अनेक क्षेत्र प्रतिवर्ष ऐसे रहते हैं जहाँ संत-सतियों का चातुर्मास नहीं होता एवं वहाँ के लोग पर्युषण के धर्माराधन से भी वंचित रहते हैं। इस कमी के निवारण हेतु आपकी प्रेरणा से 'स्वाध्याय संघ' के माध्यम से स्वाध्यायियों की विशाल सेना तैयार हुई, जो देश-विदेश में पर्युषण पर्वाराधन हेतु जाकर शास्त्र-वाचन, प्रवचन, चौपाई, प्रतिक्रमण आदि सभी धर्म-क्रियाओं से लाभान्वित कर रही है। जैन विद्वानों की कमी का भी आचार्यप्रवर ने अनुभव किया। फलस्वरूप जयपुर एवं जलगाँव में विद्वान् तैयार करने की संस्थाएँ खड़ी हुई जो अभी तक निरन्तर कार्य कर रही हैं। वहाँ से कई योग्य धर्माध्यापक एवं विद्वान् निकले हैं जो समाज में विभिन्न रूपों में अपनी सेवाएँ दे रहे हैं। जैन विद्वानों, कार्यकर्ताओं एवं विवेकशील धनिकों को एक मंच पर लाकर जैन विद्या के सदुपयोग हेतु आपकी प्रेरणा से 'अ.भा. श्री जैन विद्वत् परिषद्' की स्थापना हुई, जिसके तत्त्वावधान में लगभग 14 वर्षों तक अनेक गोष्ठियाँ सम्पन्न हुई एवं लगभग 80 ट्रेक्ट प्रकाशित हुए।

स्वाध्याय के साथ आपने साधना और सेवा को भी महत्त्व दिया। श्रावकों को संयम में आगे बढ़ाया। आपने अपने 50वें जन्म-दिवस पर वर्षभर में 50 आजीवन शीलव्रती बनाने का संकल्प किया, जो संकल्प प्रतिवर्ष उत्तरोत्तर अभिवृद्ध होता रहा। सैकड़ों बारहव्रती श्रावक बने। युवकों को धर्म से जोड़ने में आपने रूढ़ि एवं परम्परा का नहीं, अपितु तर्क एवं मनोविज्ञान का प्रयोग किया। उनको सामाजिक बुराइयों को दूर कर संगठित रहने की प्रेरणा की तथा धर्म से होने वाले सात्त्विक लाभों से अवगत कराया। धनिकों को आपने कहा कि धन का उपयोग इस प्रकार करें कि वह दूसरों के आँख में काजल की तरह दिखें, कंकर की तरह नहीं। विद्वानों को आपने आचरण से जुड़ने की सीख दी। महिलाओं को आपने शीलवती रहकर स्वयं शिक्षित होने एवं बच्चों को सुसंस्कारित करने की सीख दी। नारी में ऐसी शक्ति है कि वह घर के प्रत्येक सदस्य को धर्म से जोड़

सकती है। धर्मनिष्ठ विवेकशील एवं सेवाभावी नारी घर को स्वर्ग बना सकती है। वृद्धजनों को आपने संदेश दिया कि धर्माराधना के साथ कषाय-भाव को कम करना आवश्यक है। धर्मकार्य में प्रमाद करना अपनी ही हानि है। धर्म को आपने परलोक के लिए ही नहीं इस लोक के लिए भी कल्याणकारी निरूपित किया। धर्म का लाभ इसी जीवन में शान्ति एवं आनन्द के रूप में प्राप्त होता है। किन्तु धर्म को पौशाक की भाँति नहीं अपितु जीवन-सुधार का साधन बनना चाहिए। तपस्या में होने वाले आडम्बरों को आपने हेय बताया तथा धर्म-साधना को सबके लिए सरल बनाते हुए कहा- ''धर्म साधना के लिए किसी के पास एक पैसा भी नहीं है तो भी उसके पास तीन साधन है- तन, मन और पावन वचन।'' अन्याय एवं अनीति से कमाए गए धन को अनुचित ठहराते हुए आपने फरमाया- ''बिना श्रम के, बिना न्याय के और बिना नीति के जो पैसा मिलाया जाता है, उससे कोई लखपति और करोड़पति तो हो सकता है, लेकिन वह पैसा उस परिवार को शांति व समाधि देने वाला नहीं हो सकता।''

वीतराग की उपासना आप सच्चे मन से करते थे एवं वीतराग प्रभु के गुणों को धारण करने के लिए प्रार्थना का महत्त्व स्वीकार करते थे। उनका मन्तव्य था कि हमारी प्रार्थना के केन्द्र यदि वीतराग होंगे तो निश्चित रूप से हमारी मनोवृत्ति में प्रशस्त और उच्च स्थिति आयेगी। इच्छा के परिमाण को आप सुख एवं शांति के लिए आवश्यक मानते थे। असीमित इच्छाएँ सभी पापों और अनर्थों की मूल होती है। पेट की भूख तो पाव दो पाव आटे से मिट जाती है, मगर मन की भूख तीन लोक के राज्य से भी नहीं मिटती। जीवन में निर्व्यसनता और प्रामाणिकता आपका उपयोगी संदेश था। आचार्य हस्ती प्रज्ञासम्पन्न साधक एवं मानवीय जीवन-मूल्यों के पक्षधर थे। मानव-सेवा, प्राणिमात्र के प्रति दया, सहिष्णुता, समन्वयशीलता, साधर्मि-वात्सल्य आदि के माध्यम से आपने मानवीय करुणा एवं मैत्री को प्रोत्साहित किया। पारस्परिक कलह एवं विवाद को विनाश का कारण मानते हुए आपने कहा- ''बाँस भी लड़कर भस्म हो जाते हैं, मनुष्य को इससे शिक्षा लेनी चाहिए। एक का दिल-दिमाग बिगड़े उस समय दूसरा संतुलित होकर मन को सम्हाल ले, तब भी बिगड़ा हाल सुधर जाता है।''

धन्य हैं आचार्य श्री हस्ती! धन्य है उनका संयमनिष्ठ जीवन! धन्य हैं उनकी आध्यात्मिक सम्पदा! धन्य हैं व्यक्तिमात्र के उत्थान के प्रति उनकी करुणाभावना!

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

(क्रिया पद)

दो किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा- जीवकिरिया चेव, अजीवकिरिया चेव। जीवकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा- सम्मत्तकिरिया चेव, मिच्छत्तकिरिया चेव। अजीवकिरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा- इरियावहिया चेव, संपराइगा चेव। दो किरियाओ पण्णत्ताओ, तं जहा- काइया चेव, आहिगरणिया चेव। काइया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा अणुवरयकायकिरिया चेव, दुपउत्तकायकिरिया चेव। आहिगरणिया किरिया दुविहा पण्णत्ता, तं जहा- संजोयणाधिकरणिया चेव, णिव्वत्तणाधिकरणिया चेव। दो किरियाओ पण्णत्ताओ तं जहा- पाओसिया चेव, पारियावणिया चेव।

क्रिया दो प्रकार की कही गई है-जीवक्रिया (जीव की प्रवृत्ति) और अजीवक्रिया (पुद्गल वर्गणाओं की कर्मरूप में परिणति)। जीवक्रिया दो प्रकार की कही गई है- सम्यक्त्वक्रिया (सम्यग्दर्शन बढ़ाने वाली क्रिया) और मिथ्यात्वक्रिया (मिथ्यादर्शन बढ़ाने वाली क्रिया)। अजीव क्रिया दो प्रकार की होती है- ऐर्यापथिकी (वीतराग को होने वाली कर्मास्रवरूप क्रिया) और साम्परायिकी (सकषाय जीव को होने वाली कर्मास्रवरूप क्रिया)

पुनः क्रिया दो प्रकार की कही गई है- कायिकी (शारीरिक क्रिया) और आधिकरणिकी (अधिकरण-शस्त्र आदि की प्रवृत्तिरूप क्रिया)। कायिकी क्रिया दो प्रकार की कही गई है- अनुपरतकायक्रिया (विरति-रहित व्यक्ति की शारीरिक प्रवृत्ति) और दुष्प्रयुक्त कायक्रिया (इन्द्रिय और मन के विषयों में आसक्त प्रमत्तसंयत की शारीरिक प्रवृत्तिरूप क्रिया)। आधिकरणिकी क्रिया दो प्रकार की कही गई है- संयोजनाधिकरणिकी क्रिया (पूर्वनिर्मित भागों को जोड़कर शस्त्र-निर्माण करने की क्रिया) और निर्वर्तनाधिकरणिकी क्रिया (नये सिरे से शस्त्र-निर्माण करने की क्रिया)।

पुनः क्रिया दो प्रकार की कही गई है- प्रादोषिकी (मात्सर्यभावरूप क्रिया) और पारितापनिकी (दूसरों को संताप देने वाली क्रिया)।

-व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र, सप्तम शतक, उद्देशक-2, गाथा-36-38

अमृत-चिन्तन

विचार-वारिधि

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा.

- बिना प्रयोजन के हिंसादि पाप का सेवन अनर्थ-दण्ड है। अनर्थ-दण्ड से अणुव्रतों की मर्यादा सुरक्षित नहीं रहती। अनर्थ-दण्ड छोड़ने वाला, अर्थ-दण्ड की भी कुछ सीमा करता है। द्रव्य, क्षेत्र और काल से वह अर्थदण्ड का त्याग कर सकता है।
- अनर्थ-दण्ड के प्रमुख कारण हैं- 1. मोह, 2. अज्ञान तथा 3. प्रमाद।
- प्रमाद से आचरित सभी कर्म अनर्थ-दण्ड हैं। अपध्यान से भी अनर्थ-दण्ड होता है। आवश्यक निद्रा अर्थ-दण्ड है और अनावश्यक अनर्थ-दण्ड। यह प्रमादकृत अनर्थ है।
- आज अनर्थ-दण्ड का प्रसार जोरों पर है। जीव-हिंसा के साधन नित नए-नए बनते जा रहे हैं। खटमल और मच्छरों को मारने की दवा, मछली पकड़ने के कांटे, चूहे-बिल्ली को मारने की गोली और न जाने क्या-क्या हिंसावर्द्धिनी वस्तुओं को बनाने में मानव मस्तिष्क उलझा हुआ है। ये सारे अनर्थ-दण्ड हैं, जिनसे बचने में ही जीव का कल्याण है।
- विवेक से काम लिया जाय तो कौतुहल, शृंगार, सजावट और दिलबहलाव के लिए की जाने वाली निरर्थक हिंसा से मनुष्य सहज ही बच सकता है। ऐसा करके वह अनेक अनर्थों से बचेगा और राष्ट्र का हित करने में भी अपना योगदान कर सकेगा।
- हमको अशुभ से शुभ में आना है और शुभ में आकर भी विराम नहीं करना है, टिकना नहीं है, शुभ से संतुष्ट नहीं होना है। शुभ क्रिया से शुद्ध की ओर आगे बढ़ना है। शुद्ध क्रिया से आगे बढ़कर अक्रिय हो जाना है।
- संसार के सामान्य प्राणी अशुभ क्रिया में सदा रचे पचे होते हैं। अशुभ में रहने के लिये, अशुभ क्रिया में पड़ने के लिये उनको कहने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

-'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार

प्रवचन

दुनियाँ दुःखकारी

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा.

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा द्वारा दिनांक 09 अक्टूबर, 2009 को पालड़ी-अहमदाबाद वर्षावास में फरमाए गए प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतन जी मेहता द्वारा किया गया-सम्पादक

दुःखकारी दुनियाँ से छुटकारा पाने के लिए दोष और दोष के मूल दुर्बुद्धि को तिलांजलि देकर सम्पूर्ण दुःखों का अन्त करने वाले अनन्त-अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और दोषों की भूमिका को समाप्त कर दोषों के फल को मिटाने के लिए अहर्निश तत्पर-तल्लीन निर्दोषता के लिए सजग आचार्य भगवन्त के चरणों में वन्दन करने के पश्चात्-

मुनिराज (श्री योगेशमुनि जी) ने सुनाया- दुनियाँ दुःखकारी। दुनियाँ दुःखकारी की अनुभूति के सम्बन्ध में आप में से किसी के भीतर कोई विपरीतता नहीं है। आप स्वयं अपने जीवन में पचासों बार ऐसी अनुभूति करके बैठे हुए हैं। कभी बस में चढ़ते हुए पर्स निकल गया उस समय कैसी अनुभूति रही? कभी दिए गए चैक की रकम कोई लेकर भाग गया, उस समय कैसी अनुभूति रही? कभी ट्रेन पकड़ने के लिए अचानक दौड़ते-दौड़ते गिर पड़े, टाँग कट गई उस समय कैसी अनुभूति रही? अचानक यूनियन कार्बाइड गैस के रिसाव के समय बच्चे को मृत समझकर जलाने के समय उसे होश आया तब कैसी अनुभूति हुई? स्कूल में खेलते-खेलते अचानक कोई विपरीत दृश्य बच्चे ने देखा और डर गया उस समय कैसी अनुभूति रही? स्थानक के पास से गाड़ी चोरी चली गई, ये दृश्य आपके सामने बीतते हैं तब लगता है- दुनियाँ दुःखकारी!

इस दुःखकारी दुनियाँ में दुःखों का समापन इस जीव को अनुभव नहीं हुआ। ज्ञानियों ने बताया- **अपने को वस्तु मान लेने से अथवा वस्तु को अपनी मान लेने से चित्त अशुद्ध हो जाता है।** अशुद्धि में धर्म टिकता नहीं। सरलता से शुद्धि होती है और शुद्धि में धर्म ठहरता है, यह बात उत्तराध्ययन सूत्र के तीसरे अध्ययन की बारहवीं गाथा कह रही है। अभी उसका विवेचन इष्ट नहीं

है। अभी पहली बात है- अपने आपको वस्तु मान लेना। आप बोलते हैं- अजीव को जीव श्रद्धे तो मिथ्यात्व। इस नाम के साथ जरा सा कोई कुछ बोलता है, समाचार पत्र में कुछ छप जाता है, पत्रिका में कुछ विपरीत पढ़ने में आता है तब कैसा लगता है? नाम वस्तु है। यह शरीर वस्तु है। अनादिकाल से हमने अपने आपको वस्तु माना। अपने को वस्तु मान लेना अगृहीत मिथ्यात्व है। अपने को वस्तु मान लिया इसलिए अहंकार पैदा होता है। यह जीव शरीर से जुड़ता है। शरीर को अपना मान लिया, वस्तु को अपना मान लिया, घर को अपना मान लिया, परिवार को अपना मान लिया, कार-बँगले को, बच्चों को, बैंक-बेलेंस को अपना मान लिया। अपने को वस्तु मानने में शरीर और नाम मुख्य आयेंगे। वस्तु को अपना मानने में बाहर का सम्बन्ध आयेगा। बाहर की वस्तु से ममता आयेगी और शरीर एवं नाम से अहंकार आयेगा। इसी अहंकार और ममकार के कारण यह जीव संसार से जुड़ता है। जहाँ संसार से जुड़ाव है, वहाँ दुःख है। इसके सम्बन्ध में उत्तराध्ययन सूत्र के 19 वें अध्ययन की 91 वीं गाथा-

निम्ममो निरहंकारो निस्संगो चत्तगारवो।
समो य सव्वभूएसु तसेसु थावरेसु य॥

ममकार, अहंकार, संग और गर्व (गारव), ये चारों छोड़ने होते हैं। ये दुःख के कारण हैं। संग कहते हैं आसक्ति को। संसार से जीव जुड़ता है तो दुःख होता है, सुख होता है। बाहर का कोई दुःख-सुख जीव को प्रभावित कर सकता है क्या? इस जीव के भीतर में अनन्त शांति एवं अनन्त सुख मौजूद है। दुनियाँ के सारे जीवों के सुख को इकट्ठा कर लें, स्क्वायर से स्क्वायर करते जायँ, अनन्त वर्ग कर लें तो भी सिद्धों के सुख की बराबरी नहीं हो सकती। जीव के भीतर अनन्त शांति है। भीतर की शांति की किसी से तुलना नहीं हो सकती।

संयम से पायेगें, शान्ति अनमोल, मुक्ति में जायेंगे बन्धन सारे खोल।
जीवों में अपनापन बढ़ती जाए प्रीत, मित्ती मे भूएसु अन्तरमन से बोल॥

नियंत्रण के लिये, संयम के लिये प्रारम्भिक स्तर पर पहले क्रिया, फिर वचन और फिर मन का क्रम है। आप तस्सउत्तरी के पाठ में देख लीजिए। वहाँ काया, बचन और फिर मन का क्रम है- ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं। 'इच्छामि ठामि' में भी काइओ वाइओ माणसिओ से यही क्रम व्यक्त होता है। जहाँ

भगवान् की स्तुति या गुणगान करने हैं वहाँ पहले वचन है, फिर काया और फिर मन ऐसा क्रम है। वन्दामि-गुणगान करता हूँ, नमंसामि-काया से झुकता हूँ, सक्कारेमि- मन से सत्कार करता हूँ। लोगस्स का पाठ देख लीजिये वहाँ कित्तिय-वंदिय-महिया पाठ है। वचन से कीर्तन करता हूँ, काया से भक्ति करता हूँ और मन से महिमा करता हूँ। जहाँ पाप छोड़ने की बात है वहाँ क्रम है- मन, वचन और काया। किन्तु व्यवहार की अपेक्षा हम पहले क्रिया को नियंत्रित करके चलते हैं। काया को पहले वश में करना पड़ता है। सामायिक पच्चक्ख कर बैठें तो एक आसन पर बैठेंगे फिर खराब वचन नहीं बोलेंगे। पहले काया, वचन और फिर मन। काया से एक आसन पर बैठेंगे, किसी की निन्दा नहीं करेंगे, फिर मन लगाने का अभ्यास होगा। मन लगाने के लिए काया और वचन का नियन्त्रण आवश्यक है। कोई पहलवान बनने जाता है तो वह एक दिन में पहलवान नहीं बन जाता। वह पहले दिन एक किलो दूध नहीं पीता, पहले दिन सौ बैठक नहीं करता। तेल मालिश भी एक दिन करने से काम नहीं चलता। पहले दिन पाव भर दूध पीता है, दूध में थोड़े घी के छाँटे डालता है, धीरे-धीरे अभ्यास करते-करते वह पच्चास -सौ दण्ड-बैठक करने लगेगा, सेर भर दूध पी जायेगा। अभ्यास करते-करते वह पाँच किलो दूध पी जायेगा, पाव भर घी डकार जायेगा। बस यही बात, साधक के लिए है। हाँ, कोई विरला साधक जो पहले जन्म में अच्छी साधना करके आया है वह जल्दी जग सकता है। वरना गीताकार भी कहते हैं-अभ्यासेन तु कौन्तेय, वैराग्येण च धार्यते।

जो प्रारम्भिक स्तर पर है, वह अभ्यास करते-करते आगे बढ़ जाता है। पर कब? जब तक अन्तर से वस्तु से अपनापन नहीं निकलेगा तब तक हम भले ही काया को कस लें, वचन को नियन्त्रित कर लें, किन्तु मन पर नियन्त्रण नहीं होगा तो छुटकारा नहीं हो सकता और मन से भी आगे आत्म परिणति से नियन्त्रण की आवश्यकता है। यह जीव नौ ग्रैवेयक तक जाकर आ गया। मन से चारित्र पाला, पर भीतर की राग-द्वेष की गाँठ नहीं खुली, अतः आगे नहीं बढ़ सका। अनन्तानुबंधी कषाय का क्षय सिर्फ मानव के भव में ही हो सकता है। मिथ्यात्व का क्षय एवं मिश्र मोहनीय का क्षय भी मात्र मानव कर सकता है। अहा, कितना सुन्दर अधिकारी है। हम चाहें तो अनन्तानुबंधी कषाय का क्षय

कर सकते हैं। यह मानव जीवन पेट भरने के लिए नहीं मिला है, परिवार चलाने के लिए भी मानव-जीवन नहीं। यह जीवन जड़ से नाता जोड़ने के लिए नहीं मिला। यह जीवन मिला है मिथ्या मान्यता के अन्त के लिए। दुर्बुद्धि से दोष होते हैं और दोष से दुःख आता है।

जिसे दुनियाँ दुःखकारी लगती है वह उसे सुखकारी करने के लिए रात-दिन एक करता है। दुनियाँ दुःखकारी है तो उससे मुक्ति के लिए व्यक्ति क्यों नहीं प्रयास करता? यह ध्यान रहे कि पानी का बिलौना करके मक्खन नहीं निकाला जा सकता। रेत के कणों से तेल नहीं निकलता, आंकड़े के बीज लेकर आम की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है।

हम याद रखें कि हमारा यह जीव तीन काल में भी जड़ नहीं हो सकता। यह जीव तीन काल में शरीर नहीं हो सकता। शरीर को सुरक्षित रखते हुए साता वेदनीय लगातार नहीं आ सकती। थोकड़े जानने वाले बताते हैं कि एक साता के पीछे 15 असाता लगी हुई है। थोड़ी साता, लम्बी असाता। असाता का क्षण साता की आसक्ति तोड़ने का पाठ पढ़ाता है। उत्तराध्ययन सूत्र का 29 वाँ अध्ययन यह गुनगुनाता है-

धम्मसद्धाए णं सायासोक्खेसु रज्जमाणे विरज्जइ।

साता की आसक्ति टूटे तो धर्म की श्रद्धा आए। व्यक्ति धार्मिक क्रिया कर सकता है, माला फेर सकता है, पर माला में बैठे हुए को पैसा चाहिये, पुत्र चाहिये, स्वास्थ्य चाहिये तो? बड़ा अन्तर है- भगवान् से चाहना और भगवान को चाहना। आचार्य श्री (हीराचन्द्र जी म.सा.)ने कुछ दिन पहले फरमाया था कि भगवान् को चाहने वाला भगवान् के नजदीक जाता है और भगवान् से चाहने वाला संसार बढ़ाता है। वह बेटा चाहता है, धन चाहता है, बँगला और मोटर चाहता है। जब कार-मोटर-बँगला-पुत्र-धन-संपति नहीं मिलती तब वह कहता है मैंने इतनी सामायिकें की फिर भी मुझे कुछ नहीं मिला। भगवान् को चाहने वाला संसार घटाता है और घटे हुए संसार को अच्छे से अच्छा बनाता है, भगवान से चाहने वाला संसार को बढ़ाता है और बढ़े हुए संसार को खराब-से-खराब करता जाता है।

न सा जाई न सा जोणी न तट्ठाणं न तक्कुलं।
न जाया न मुआ जत्थ, सव्वे जीवा अणन्तसो॥

ऐसी कोई जाति नहीं, ऐसी कोई योनि नहीं, ऐसा कोई स्थान नहीं, ऐसा कोई कुल नहीं जहाँ यह जीव जन्मा और मरा नहीं। यानी हर कुल में इस जीव ने जन्म लिया एवं मरण पाया है। टीकमचन्द जी हीरावत की डायरी में लिखा है कि मनुष्य की बुद्धि में 96 खरब सैल बताये गये हैं। पैंतीस साल की उम्र से प्रतिदिन सात हजार सैल मरते जाते हैं। आदमी जो-जो भी काम करता है, उनसे सम्बद्ध अधिकतर बातें भूल जाता है। अगर किसी को जाति स्मरण ज्ञान हो जाय तो उसकी हालत खराब हो जाय। अरे फलाने जन्म में मैं श्मशान की लकड़ियों में जल रहा था, मैं उस जन्म में लकड़ी लेकर चल रहा था। मेरी कमर झुक गई थी। मृगापुत्र इस जन्म में सुख की कल्पना कर रहा है। उसकी संपत्ति किसी ने नहीं छीनी, राजमहल नष्ट नहीं हुआ। राजरानियाँ तलाक देकर नहीं भागी, नौकर-चाकर सब थे- भागे नहीं। मृगापुत्र का जीव कब का है। वह जीव भगवान् ऋषभदेव के शासन का है। पाँच महाव्रत दो बार पहले एवं अन्तिम तीर्थंकर के शासन में ही हो सकते हैं। इतना अच्छा घर और सुख के सारे साधन अनुकूल हैं, फिर उसे क्यों बौखलाहट लगी? संत को देखकर लगा- "मैंने कहीं देखा है। देखते-देखते उसने जाना कि मैं तो खुद साधु बना हुआ था। वह सारे भव देखता है। 19 वें अध्ययन की 8,9,10,11,12 वीं गाथा देख लीजिये। इस अशाश्वत शरीर में मुझे एक क्षण भी आनन्द नहीं आता है। *असासए सरीरम्मि रइं नोवि लभामहं*। भरत की अंगूठी निकल गई, हाथ फीका दिख रहा है। अँगुली रमणीक से अरमणीक बन गई। अनन्त बार ऐसे मौके आते रहते हैं जब जीव हँसमुख से अहँसमुख बन जाता है। क्यों? वस्तु में अपनापन और अपने में वस्तु बैठी है तो वहाँ हँसी गायब हो गई। भरत का न महल छूटा, न शरीर छूटा, लेकिन अन्तर की ममता छूट गई।

शरीर तो रहेगा, पर कायोत्सर्ग हो जायेगा, ममता छूट जायेगी। एक व्यक्ति के पास पाँच करोड़ का बँगला है। बच्चे चाहते हैं इस बँगले को बेच दें, नया लें लें, पर पिताजी पुराना बँगला बेचना नहीं चाहते। बच्चों की बात नहीं भी मानें तो भी सेठ साहब को कुछ रिनोवेशन तो कराना पड़ेगा। पास रहने वाले पड़ौसी को बँगला लेना था। अभी तक बात नहीं कर रहा था, खरीदने जायेंगे तो महंगा मिलेगा। सेठ जी ने आर्किटेक्ट को बुलाया। 10 लाख में नवीनीकरण

तय हुआ, 25 हजार अग्रिम भी दे दिये। पड़ौसी को पता चला खरीदना ही है, मोल भाव से आठ करोड़ तय हुआ। अब सेठजी ने कहा- बँगला तो देंगे, किन्तु छः महीने इसी में रहना होगा तब तक दूसरी व्यवस्था कर लेंगे। कोई बात नहीं, छः महीने बाद देना। सेठजी ने रिनोवेशन के लिए आर्किटेक्ट को पच्चीस हजार एडवांस दे रखे थे। एडवांस की रकम आए या नहीं उसकी चिंता नहीं। 20 साल से उसी में रह रहे थे, अब छः महीने रहना है, पर अब कितना अपनापन लगेगा। 20 साल से बंगले में जो अपनापन था, वह अब कहाँ चला गया? अब तक उसकी दीवार में एक छेद से भीतर में दहशत होती थी, आज स्वयं जितना सामान निकालना है निकालने को तैयार है। मुझे बँगला खाली करना है तो बँगले में कहीं कोई पेन्टिंग है उसे ले चलो, कहीं कोई सामान लगा है उसे उखाड़ कर ले चलो। क्यों? यह चमत्कार कब? जब लगा कि यह बँगला मेरा नहीं। मेरा नहीं यह भावना आ गई तो फिर अन्तर में ऐसा चमत्कार आयेगा कि व्यक्ति को खाने-पीने तक का ध्यान नहीं रहेगा, ध्यान रहेगा तो मात्र मोक्ष का। फिर मात्र मोक्ष की अभिलाषा रहेगी।

दुःख का मूल है- वस्तु को अपनी समझना या अपने को वस्तु मानना। अहंकार-ममकार छोड़ने की बात से दशवैकालिक भरा पड़ा है। उत्तराध्ययन भरा पड़ा है। गीता में भी संस्कृत अनुवाद ज्यों-का-त्यों है। उत्तराध्ययन 19/91, 35/21, दशवैकालिक- 6/69, 8/64, सूत्रकृतांग 9/6 में निर्मम/ अमम, निरहंकार/ अकिंचन, निम्ममो-निरंहकारो आदि शब्द ममता को छोड़ने की प्रेरणा करते हैं।

आप रेलवे को किराया देकर यहाँ आए हैं। सामान्य कोटे में टिकट नहीं मिले तो तत्काल में लेते हैं, तत्काल में उपलब्ध न हो तो ए.सी. का टिकट लेना मंजूर करते हैं। सामान्य कोटे में सीट मिले तो तत्काल में सीट लेने की जरूरत नहीं। रेलवे स्टेशन से आपको ऑटो लेना था। ऑटोवाला चालीस रुपये माँग रहा है, दूसरा पचास रुपये। आप कितने रुपये देकर आए? चालीस। क्योंकि ज्यादा देने की जरूरत नहीं। यही बात शरीर के लिए है। जीवन में यही दृष्टिकोण रखेंगे तो सोचेंगे उपवास से जीवन चल सकता है, तो आयंबिल क्यों करूँ? आयंबिल से गाड़ी चल रही है तो एकासना क्यों करूँ और दो समय

आहार का भाड़ा चुकाने से काम चलता है तो तीन समय भाड़ा क्यों चुकाएँ? यही दृष्टिकोण रखेंगे, शरीर को किराया चुकाना है। यह सोच होगा तो खाना-पीना-पहनना सब सीमित हो जायेगा। जब वस्तु को पर समझ लेंगे, ममता तोड़ देंगे तो उसका उपयोग सीमित हो जायेगा, अन्यथा जीव कहेगा मैं इतने द्रव्य काम लेता हूँ, इतनी सामायिकें करता हूँ। किन्तु गुणों का अभिमान दोष की भूमिका में पनपता है और दोष की भूमिका परदोष दर्शन में सुरक्षित रहती है।

जब अन्तर की आत्मा नजदीक हो जाती है तो कम-से-कम पदार्थों में काम किया जा सकता है। दस रुपये में काम बनता हो तो बीस रुपये कौन देना चाहेगा। याद रखें मैं वस्तु नहीं, वस्तु मेरी नहीं। यह सूत्र चेतना के स्तर पर गहरा उतर जाएगा तो फिर दुनियाँ दुःखकारी नहीं रहेगी, क्योंकि उसके लिए दुःख का कारण ही नहीं रहेगा। दुःख के कारण का निवारण ही दुःखहरण का सच्चा उपाय है।

प्रार्थना का महत्त्व

श्रीमती कमला सिंघवी

प्रार्थना का अभिप्राय है- हे परमात्मन्! जिस मार्ग पर चलकर आप समस्त दुःखों से मुक्त बने हो वह हमें भी प्राप्त हो जाए। वीतराग भगवान के भजन से भक्त को उसी प्रकार लाभ मिलता है जिस प्रकार सूर्य की किरणों के सेवन से एवं वायु के सेवन से रोगी को लाभ होता है।

भक्ति में महाशक्ति है। भक्ति या प्रार्थना से जन्म-जन्मान्तर के अशुभ कर्मों के दलिक नष्ट हो जाते हैं। मानसिक शान्ति के लिए प्रभु-स्मरण और प्रार्थना अत्यावश्यक है। वीतराग की प्रार्थना से आत्मा को सम्बल मिलता है। समस्त आधि-व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। देवाधिदेव वीतराग परमात्मा के स्मरण, ध्यान और प्रार्थना से जीवन में अपूर्व शान्ति की प्राप्ति होती है। भगवत्प्रार्थना से आत्मिक बल की वृद्धि होती है। प्रार्थना एकाग्रता के साथ करने से पापों का नाश होता है। प्रार्थना एक महान उच्च से उच्च श्रेणी की साधना है, जिसके माध्यम से साध्य की प्राप्ति होती है।

-अध्यापिका, जैन पाठशाला, 'ज्ञान मन्दिर', भड़गाँव (महाराष्ट्र)

जीवन-व्यवहार

धर्म तीर्थ के चारों अंग परस्पर पूरक हैं

श्री उदयमुनि जी म.सा.

व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र (14/7) में श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविकाएँ मिलकर धर्म-संघ कहे गए हैं। तीर्थंकर के शासन में चारों एकजुट रहकर धर्मसाधना या आत्मसाधना करते हैं। चारों मोक्ष मार्ग पर आरूढ़ हैं, संयमी तेज गति से और देशविरति मंद गति से। संयमी स्वयं की साधना के साथ, जो मुमुक्षु जुड़े उसे प्रेरणा, सहयोग और मार्गदर्शन करते हैं। संयमियों की साधना में विशेषतः बाह्याचार में श्रावक-श्राविकाएँ सहयोगी होते हैं, इनमें बाधक नहीं बनते हैं। यदि ये चारों आगमानुसार अपने-अपने कर्त्तव्यों-दायित्वों का निर्वाह करते हैं तो तीर्थंकर का शासन निराबाध चलता है, अन्यथा उसमें हीनता या गिरावट आती है।

यदि कोई कहे कि हम तो गृहस्थ हैं, संसारी हैं, धनवैभव की तृष्णा भी है, उस हेतु कई पाप भी करते हैं, मोह-ममता, राग-द्वेष भी हैं, कषायों में, पंचेन्द्रिय विषयों में आकंठ डूबे हुए भी हैं, परन्तु भगवान् अभी साक्षात् नहीं हैं अतः आप श्रमण-श्रमणियों को तो उन भगवान् के प्रतिरूप में परम आदर्श पुरुष के रूप में देखना चाहते हैं, तो यह संभव नहीं है।

यदि आप स्वाध्याय-सामायिक, चिन्तन-मनन एवं व्रतों की आराधना नहीं करते हैं तो संयमियों को आगमज्ञ के रूप में तथा महाव्रतों एवं समितियों के निरतिचार पालनकर्ता के रूप में नहीं पाएँगे। संयमी को भगवान् का आदेश है कि "हे सम्यग्दृष्टि, रागद्वेष-विजेता, आगमज्ञ मुनि! लोक पर अनुकम्पा भाव से धर्म का आख्यान (प्रतिपादन) कर, उसका विभेद (आत्मा-शरीर, मोक्षमार्ग-संसारमार्ग, हेय-उपादेय का भेद विज्ञान) करके धर्माचरण का सुफल प्रतिपादित कर, सद्ज्ञान (आत्मकथा) सुनने के इच्छुक (उत्थित या अनुत्थित) को (आत्म) शान्ति, (विषयों से) विरति, (कषायों का)उपशम, शौच (निर्लोभता) आर्जव, मार्दव, लाघव (क्रमशः सरलता, विनयं, लघुता) एवं अहिंसा का प्रतिपादन कर, (आचारांग प्रथम श्रुतस्कन्ध 6/5) अग्लान

भाव से (प्रसन्नता-प्रमोद से) धर्मकथा कर, किसी भी तरह की फलाकांक्षा (सूत्रकृतांग सूत्र अध्ययन 13, गाथा 574-578) उत्पन्न न करने वाला प्रवचन कर। यदि संयमी आपकी मांग या रुचि के अनुसार पहले 8-10 मिनट सूत्र देकर, रसीली कहानी, मनबहलावी चुटकले, कर्णप्रिय कविताएँ फिल्मी तर्जों पर भजन, टी.वी. सीरियल जैसा कोई मनगढंत कथानक (चारित्र) सुनाकर कथा पूरी कर दे, गृहस्थों को संसार में आने वाले सुख-दुःख, उतार-चढ़ाव, उसमें रस डालने के लिए देव-देवी द्वारा दुःख देना या फिर सुख देना ऐसा वर्णन करे, उसे इस प्रकार के मोड़ पर छोड़े कि आपको लगे अब क्या होगा, उस सांसारिक कथा को जानने हेतु कथा में दौड़े-दौड़े जाएँ, हाल खचाखच पूरा भर जाए तो संयमी को आगमों में, स्वाध्याय में रत रहकर पारायण करने की कोई आवश्यकता नहीं होगी। तब क्या महावीर का तीर्थ अविच्छिन्न चलेगा? नहीं। आप तो भटके ही, आपकी रुचि के अनुसार आपके स्तर पर चलने को बाध्य कर संयमी को भी आपने भटका दिया।

यदि आप भी स्वाध्याय करते हों, आत्मतत्त्व-अनात्मतत्त्व, देव-गुरु-धर्म, षट् द्रव्य, षट् दर्शन, जीव से लगाकर मोक्ष तत्त्व का वास्तविक स्वरूप, संवर-निर्जरा-मोक्ष हेतु रत्नत्रय स्वरूप धर्म जानना चाहते हों तो संयमी को शास्त्रों का पारायण करके, अत्यन्त सजग होकर पाट पर बैठना होगा। आप कुछ तत्त्व-ज्ञान जानते हो तो उन्हें तत्त्व-प्ररूपणा में सावधान रहना पड़ेगा। यदि तत्त्वज्ञान सुनने-समझने की आपकी जिज्ञासा नहीं है तो संयमी को स्तर गिराकर आपके निम्न कोटि के स्तर पर आना पड़ेगा। इस प्रकार दोनों की हानि होती है। होना यह चाहिए कि आप वक्ता का स्तर न गिराएँ, धीरे-धीरे अपना स्तर ऊँचा उठाएँ। संयमी आगमिक आज्ञानुसार आगमों के मर्म को खोलें और आप उन्हें ही सुनें, समझें और पालें। तभी आत्मोन्नति संभव है।

आज संयमियों के स्वाध्याय-ध्यान में भारी कमी आई है, और इसी कारण साध्वाचार-पालन में गिरावट आई है। इसका कारण क्या? जैसे आत्मोत्थान में चारों पाए, एकजुट, परस्पर पूरक, सहयोगी बनते हैं वैसे ही ये संघ के चारों पाए कमियों में, गिरावट में, शिथिल आचरण में परस्पर सहयोगी बनते हैं। आभ्यन्तर साधना में तो संयमियों का क्षयोपशम, गुरु का आगम-ज्ञान और सतत निरीक्षण व चेतावनी कारगर होती है। उसमें आपकी विशेष

भूमिका नहीं है, परन्तु महाव्रतों एवं समिति के निरतिचार पालन में श्रावक-श्राविकाओं की भूमिका अति महत्त्वपूर्ण है।

यदि कोई बहन या बहनें, विशेषतः सजीधजी नवयौवनाएँ अकेली किसी संयमी साधु के पास बैठे तो आचार संबंधी आगमों की अवहेलना होगी, इतर बातें, विकथा करने लगे तो संयमी के स्वाध्याय, अप्रमत्त साधना एवं ध्यान में बाधा पड़ेगी। यहाँ तक हो सकता है कि चौथे महाव्रत में छेद हो जाए, खंडित हो जाए, संयम भ्रष्ट होकर साधुता ही चली जाए। ऐसे कुछ हादसे अब प्रकाश में भी आने लगे हैं। दीक्षा के पूर्व गुरु के द्वारा परीक्षण एवं सतत निगाह का अभाव, गरिष्ठ या विगय वाला आहार, भोगों में आकर्षण, सभा या श्री संघ द्वारा ध्यान न देना आदि कारण भी हैं। इसमें साधु का तो भयंकर दोष है ही, किन्तु पास में अनुचित समय पर बैठने वाली बहन या बहनों का भी दोष है। एक हाथ से ताली नहीं बजती।

यदि कोई भाई संयमियों के पास बैठकर तत्त्व-जिज्ञासा और समाधान के स्थान पर अपने आरम्भ-समारंभ की वार्ता, किसी श्रावक या संघ-सम्प्रदाय के संयमियों की टीका-टिप्पणी में लग जाएँ तो संयमी को साधना से भटकाने में यह निमित्त कारण बनता है। यदि कोई भाई या बहन अपने रोग, शोक, दुःख, दारिद्र्य दूर करने हेतु उदाहरणतः बेटे-बेटी के विवाह, उनकी उच्च पढ़ाई या उच्चता प्राप्ति हेतु, न्यायालयीय-प्रकरण में विजय हेतु, शत्रुओं के दमन हेतु, बेटा प्राप्त करने हेतु, व्यापार या उद्योग प्रारम्भ करने संबंधी या उसमें वृद्धि लाभ कमाने हेतु उपचार या उपाय पूछने लग जाए तो क्या वे संयमी को इन सांसारिक प्रपंचों में, आरम्भ-संमारंभ में भागीदारी करवाकर महाव्रतों से नहीं डिगा रहे हैं? इसमें संयमियों की भी भूल है, पर इसमें क्या श्रावक बन्धु सहयोगी या निमित्त कारण नहीं बन रहे हैं?

यदि इन कार्यों के लिए आपने उनसे कोई तंत्र-मंत्र-यंत्र मांगा, कोई जाप या पाठ, चाहे वह महामंत्र नवकार या किसी तीर्थंकर की माला या लोगस्स-नमोत्थुणं का जाप-माला या उवसग्गहर जैसे स्तोत्र पूछे, आप चूंकि उनके भक्त या परमभक्त हैं, उन भक्तों के भगवान् आपकी मांग पूरी करने लगें तो क्या आप आत्म-साधना के लक्ष्यों से नहीं चूके और क्या उसी लक्ष्य से घर-परिवार-भोग-वैभव छोड़कर दीक्षा लेने वाले भगवत्-स्वरूपी संयमियों को आपने नहीं

भटका दिया? क्या आप उनके विचलन में निमित्त कारण नहीं बने?

यदि कोई संयमी आपके रोग-शोक-दुःख-दारिद्र्य निवारण हेतु कदाचित् दयाकर ये उपाय बताने में लग गए तो आत्मा के विषय-विकार मिटाने हेतु कोई मार्गदर्शक मिलेंगे? यदि आप कहते हैं कि आप तो गृहस्थ हैं, संसारी हैं और ऐसी समस्या हेतु आप संयमी हमें उपचार नहीं बताएँ तो हम कहाँ जाएँ? दुःखी हो जाएंगे या कुतीर्थिकों के पास भटकते फिरेंगे, इससे अच्छा हो आप ही ये मंत्रादि बता दें। चार-चार आगमों में संयमी को ये तंत्रमंत्रादि साधने की सख्त मनाई है। आत्म-साधना करते हुए कोई बाह्य लब्धि या चमत्कार प्रकट हो जाएँ तो उनका उपयोग करने की आगमों में सख्त मनाई है।

नवकार आदि पाठ, छोटी या बड़ी मांगलिक या महामंगल पाठ आपके आत्मविकार मिटाने, आत्मशुद्धि प्रकट करने में प्रबल निमित्त कारण हैं। कृत तप-त्याग कर्मों के संवर और निर्जरा में सहायक या साधन हैं। आपके घर या नवनिर्मित या निर्माणाधीन कोठी पर, दुकान या कारखाने आदि में संयमी के चरण डलवाएं, पगलिए करवाएं तब क्या आपका लक्ष्य सांसारिक नहीं है? इन आध्यात्मिक निमित्तों को क्या आप सांसारिक कार्यों में काम लेने की भूल नहीं कर रहे हैं? संवर-निर्जरा के निमित्त तप-त्याग को सांसारिक कार्यों में उपयोग लेने से क्या मिथ्यात्व में नहीं जा रहे हैं? आप स्वयं भी भटके और संयमी को भी भटका दिया। साता वेदनीय के उदय से साता आ जाए तो इनके प्रति श्रद्धा जमेगी और असाता के उदय से साता नहीं आई तो अश्रद्धा होने पर धर्म से या उपाय बताने वाले से विमुख हो जायेंगे। ऐसी स्थिति में उन संयमियों से घृणा हो जाने जैसे उदाहरण देखे हैं।

समिति-पालन से बंधी पाँच समितियों में से एक एषणा समिति का पालन गृहस्थ पर भी निर्भर है। अहिंसा महाव्रत की सहयोगी है एषणा समिति। गृहस्थ अपने परिवार के लिए जो आहार बनाता है उस में से थोड़ा सा संयमी ले। जैसे गाय थोड़ा-थोड़ा घास चरती है, भौंरा फूलों से रस लेता है, ये घास या फूलों को भी हानि नहीं पहुँचाते और अपनी उदरपूर्ति भी कर लेते हैं। ऐसा ही संयमी भी करे। आचारांग सूत्र, दशवैकालिक सूत्र के प्रथम तीन अध्ययनों में व्यापक और सूक्ष्म विवेचन है। आहार बनाने, देने-लेने, ग्रहण करने फिर भोगने संबंधी 42 एवं भोगैषणा के पांच ऐसे 47 दोष संयमी को टालने चाहिए।

प्रासुक अर्थात् अचित्त, सचित्त के स्पर्श रहित, सचित्त के स्पर्श वाला आहार दाता न दे और संयमी न ले। बहराने और लेने वाला दोषों से परे रहे। बारीक और सरल नियम हैं। इनके पालन में गृहस्थ की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। वह इन्हें न जाने न पाले तो संयमी को दोष लगेंगे। गृहस्थ इनमें लापरवाह हो और संयमी को निर्दोष आहार न मिले तो उस हेतु कब तक भटकते फिरेंगे? संयम-निर्वाह हेतु उन्हें शरीर चलाने के लिए आहार-पानी तो लेना पड़ेगा।

गृहस्थ इन नियमों से अनभिज्ञ हैं, लापरवाह हैं और संयमी मजबूरी से उन्हें नज़र अन्दाज कर आहार ले ले तो आप उसे कोसते हैं, कोहराम मचा देते हैं, टीका टिप्पणी करते हैं, शिथिलाचारी का कलंक लगाते हैं, साधु ही नहीं है, यहाँ तक कहते हैं। संयमी निश्चित ही इन नियमों का भंगकर आहार पानी ले तो दोषी है, पर उसमें निमित्त कारण क्या आप गृहस्थ नहीं हैं?

आज पानी तो संयमी को निर्दोष मिलता नहीं, परन्तु आपकी दिनचर्या भोजन के तौर-तरीके और काल इतना विकृत, विपरीत हो गया है कि निर्दोष आहार मिलना भी अत्यन्त कठिन हो गया है। आपका नाश्ता प्रातः 8 से 9 बजे, मध्याह्न आहार दो-ढ़ाई बजे, संध्या भोजन रात में 9 से 10 बजे। फिर आपका भोजन कैसा? प्याज-लहसुन-आलु आदि जमीकंद वाला, मैदा से बने ढेर सारे बेकरी निर्मित, तले-गले-गरिष्ठ दुष्पाच्य भोजन, विकृत, मृत भोजन। ऐसा आहार लेकर संयमी कैसे शरीर को नीरोगी रखें, कैसे आत्मसाधना करें, यह एक भारी समस्या संयमियों के समक्ष है। ऐसी स्थिति में संयमी को निर्दोष, शुद्ध, सात्त्विक, सुपाच्य आहार कहाँ मिलेगा, कैसे मिलेगा, क्या आप गृहस्थों ने कभी सोचा? आपका 12वां व्रत कब पलेगा?

मैं सामान्यतः पाता हूँ- कपड़े या पन्नी में लिपटी एक या दो रूखी चपाती, ढ़ेर सारे पानी में सब्जी के टुकड़े, कूकर में खूब पानी में एकाध मुट्ठी कोई दाल उबली हुई पड़ी है। पूछता नहीं, कदाचित् पूछूँ तो बहनें कहती हैं- महाराज जी बिना नमक-घी या तेल रहित आहार कोई करता नहीं, आपके लिये बनाया है। मेरे माथे पर जैसे हथौड़ा पड़ गया। लूं तो भारी दोष है, वह है आधाकर्मी। न लूं तो भटकता फिरूं, या खाली पात्री लेकर लौटूँ, भूखा रहूँ, अन्ततः क्या संथारा कर लूँ? इसके निवारणार्थ यदि आपने बारी बांधी तब भी आहार दोषपूर्ण एवं आधाकर्मी होगा। आपकी मानूँ या भगवान् की आज्ञा मानूँ। विगय वाला

आहार न लूँ ऐसा सात आगमों में स्पष्ट निर्देश है। रस परित्याग विशिष्ट तप है। रसनेन्द्रिय पर विजय एवं ब्रह्मचर्य महाव्रत के पालन हेतु क्या विगयों का त्याग न करूँ?

निष्कर्ष है कि संयमियों की उत्कृष्ट आत्मसाधना हेतु श्रावक-श्राविकाओं को सहयोगी होना पड़ेगा, महाव्रतों और समितियों के निरतिचार निर्दोष पालन में संयमियों के सहयोगी बनें। दोनों दोष से परे रहें, ऐसा आहार दें।

महावीर के संदेशों को घर-घर में पहुँचाइए

श्री मोहन कोठारी ''विनर''

महावीर के संदेशों को, घर-घर में पहुँचाइए,
जिनवाणी को धार कर, आत्म-सुख को पाइए।
महावीर के संदेशों को.....।

वीर ने बताई जो, जीने की कला हमें,
उन महान रास्तों पे, चलना है सदा हमें।
जिंदगी का यह चमन, मुस्कुरायेगा,
धर्म-साधना में, इस मन को तुम लगाइए।
महावीर के संदेशों को..... ।।1 ।।

धन की लालसा हमें, भव-भव में रुलायेगी,
सुख-साधनों की चाह तो, अशांति बढ़ायेगी।
आडम्बरों को छोड़कर, सादगी अपनाइए,
पतन के रास्तों से तुम, यह जिंदगी बचाइए।
महावीर के संदेशों को..... ।।2 ।।

आज इस जमाने की, है फिज़ा बदली हुई,
संभल कर चलना सदा, बदफेलियां गली-गली।
अपनी संतानों को तुम, धर्म में लगाइए,
जैनी बन के जीने की, कला तुम सिखाइए।
महावीर के संदेशों को..... ।।3 ।।

-जनता साड़ी सेन्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001(छत्तीसगढ़)

शोधालेख

भारतीय तंत्र-साधना और जैन धर्म-दर्शन(4)

प्रो. सागरमल जैन

जैन योग और पातंजल योग : एक समन्वय–

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि वे सभी भारतीय दार्शनिक परम्पराएँ जो चित्तविशुद्धि या आत्मविशुद्धि (समाधि) को अपना लक्ष्य बना कर चलती हैं, उन सभी में किसी न किसी में योग–साधना का स्थान रहा हुआ है। इस दृष्टि से यदि हम विचार करें तो मुख्य रूप से तीन वर्ग हमारे सामने आते हैं।

1. पातञ्जल योग

2. बौद्ध योग

3. जैन योग

जहाँ तक पातञ्जल योग और जैन योग की तुलना एवं समन्वय का प्रश्न है सर्वप्रथम हमें यह समझ लेना होगा कि इन दोनों परम्पराओं में प्रारम्भिककाल में 'योग' शब्द दो भिन्न अर्थों में ही प्रयुक्त होता था। जहाँ जैन परम्परा में योग शब्द का अर्थ मन, वाणी और शरीर की प्रवृत्ति था, जो आस्रव एवं बन्ध की हेतु थी वहीं पातञ्जल योग में शब्द को 'चित्तवृत्तियों के निरोध' के अर्थ में स्वीकार किया गया था, जो मुक्ति का हेतु थी। फिर भी योगसूत्र और तत्त्वार्थसूत्र में ऐसे अनेक सन्दर्भ हैं जो उनकी संवादिता के सूचक हैं। पं. सुखलाल जी संघवी ने तत्त्वार्थ सूत्र की भूमिका (पृ. 55–56) में उन प्रसंगों की तुलना की है, जो जैन दर्शन और योग दर्शन की एक–दूसरे से निकटता को सूचित करते हैं। मैं यहाँ अति विस्तार में न जाकर केवल उस संक्षिप्त सूची को ही प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिससे जैन दर्शन, बौद्ध दर्शन और योग दर्शन की निकटता को समझा जा सकता है–

तत्त्वार्थ सूत्र	योग दर्शन
1. कायिक, वाचिक, मानसिक प्रवृत्ति-रूप आस्रव (6.1)	1. कर्माशय (2.12)

2. मानसिक आस्रव (8.1)	2. निरोध के विषयरूप में ली जाने वाली चित्तवृत्तियाँ (1.6)
3. सकषाय व अकषाय- यह दो प्रकार का आस्रव (6.5)	3. किलष्ट और अक्लिष्ट दो प्रकार का कर्माशय (2.12)
4. सुख-दुःखजनक शुभ व अशुभ आस्रव (6.3-4)	4. सुख-दुःखजनक पुण्य व अपुण्य कर्माशय (2.14)
5. मिथ्यादर्शन आदि बन्ध के पाँच हेतु (8.1)	5. अविद्या आदि पाँच बन्धक क्लेश (2.3)
6. पाँचों में मिथ्यादर्शन की प्रधानता	6. पाँचों में अविद्या की प्रधानता (2.4)
7. आत्मा और कर्म का विलक्षण सम्बन्ध ही बन्ध (8.2,3)	7. पुरुष और प्रकृति का विलक्षण संयोग ही बन्ध (2.17)
8. बन्ध ही शुभ-अशुभ हेय विपाक का कारण।	8. पुरुष और प्रकृति का संयोग ही हेय दुःख का हेतु (2.17)
9. अनादि बन्ध मिथ्यादर्शन के अधीन।	9. अनादि संयोग अविद्या के अधीन (2.24)
10. कर्मों के अनुभागबन्ध का आधार कषाय (6.5)	10. कर्मों के विपाकजनन का मूल क्लेश (2.13)
11. आस्रवनिरोध ही संवर (9.1)	11. चित्तवृत्तिनिरोध ही योग (1.2)
12. गुप्ति-समिति आदि और विविध तप आदि संवर के उपाय (9.2-3)	12. यम, नियम आदि और अभ्यास, वैराग्य आदि योग के उपाय (2.12 से और 2.29 से)
13. अहिंसा आदि महाव्रत (7.1)	13. अहिंसा आदि सार्वभौम यम (2.30)
14. हिंसा आदि वृत्तियों में ऐहिक, पारलौकिक दोषों का दर्शन करके उन्हें रोकना (7.4)।	14. प्रतिपक्ष भावना द्वारा हिंसा आदि वितर्कों को रोकना (2.33-34)
15. हिंसा आदि दोषों में दुःखपने की ही भावना करके उन्हें त्यागना (7.5)।	15. विवेकी की दृष्टि में सम्पूर्ण कर्माशय दुःखरूप (2.15)

16. मैत्री आदि चार भावनाएँ (7.6)	16. मैत्री आदि चार भावनाएँ[1] (1.33)
17. पृथक्त्व - वितर्क सविचार और एकत्व-वितर्कनिर्विचार आदि चार शुक्ल ध्यान (9.41-46)	17. सवितर्क, निर्वितर्क, सविचार और निर्विचाररूप चार संप्रज्ञात समाधियाँ[2] (1.16 और 41,44)
18. निर्जरा और मोक्ष (9.3 और 10.3)	18. आंशिक हान-बन्धोपरम और सर्वथाहान[3] (2.25)
19. ज्ञानसहित चारित्र ही निर्जरा और मोक्ष का हेतु (1.1)	19. सांगयोगसहित विवेकख्याति ही हान का उपाय (2.26)
20. जातिस्मरण, अवधि-ज्ञानादि दिव्य-ज्ञान और चारणविद्यादि लब्धियाँ (1.12 और 10.7 का भाष्य)	20. संयमजनित वैसी ही विभूतियाँ[4] (2.29 और 3.16 से आगे)
21. केवलज्ञान (10.1)	21. विवेकजन्य तारक ज्ञान (3.54)

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन-योग, बौद्ध-योग और पातञ्जल-योग अनेक सन्दर्भों में एक-दूसरे के अति निकट हैं। यद्यपि यहाँ कहना अति कठिन है कि जो समरूपताएँ परिलक्षित हो रही हैं उन्हें किस परम्परा से किससे गृहीत किया है, क्योंकि अनेक सन्दर्भों में विचार साम्य होते हुए भी भिन्न-भिन्न शब्दावलियों का प्रयोग हुआ है।

जैन-योग और पातञ्जल-योग के पारस्परिक समन्वय के सूत्र हमें आचार्य हरिभद्र (लगभग 8 वीं शती) के काल से मिलने लगते हैं। आचार्य हरिभद्र ने सर्वप्रथम जैन-दर्शन में जो 'योग' शब्द की परिभाषा एवं व्याख्या चली आ रही थी उसे परिवर्तित किया और यह कहा कि जो मोक्ष से जोड़ता है, वह योग है। अतः यहाँ जैन दर्शन और योगदर्शन दोनों ही चित्त वृत्ति के निरोध

---

1. ये चार भावनाएँ बौद्ध परम्परा में 'ब्रह्मविहार' कहलाती हैं और इन पर बहुत जोर दिया गया है।
2. ध्यान के ये चार भेद बौद्धदर्शन में भी प्रसिद्ध हैं।
3. इसे बौद्धदर्शन में निर्वाण कहते हैं, जो तीसरा आर्यसत्य है।
4. बौद्ध दर्शन में इनके स्थान पर पाँच अभिज्ञाएँ हैं। देखेः- धर्मसंग्रह, पृ.4 और अभिधम्मत्थसंग्रहो, परिच्छेद 9, अनुच्छेद-24

को योग के रूप में स्वीकार करते हैं। यहाँ यह ध्यातव्य है कि इस प्रकार से योग शब्द मोक्ष मार्ग के रूप में दोनों परम्पराओं में स्वीकृत हो गया। आचार्य हरिभद्र के योग सम्बन्धी चार ग्रन्थ उपलब्ध हैं-

1. योग बिन्दु
2. योगशतक
3. योगविंशिका
4. योग दृष्टिसमुच्चय

इन चारों ग्रन्थों पर योगसूत्र और कौलतन्त्र का पर्याप्त प्रभाव है। पतंजलि के अष्टांगयोग को हरिभद्र ने आठ योगदृष्टियों के रूप में विवेचित किया है। कौलतन्त्र के आधार पर कुलयोगी, गौत्रयोगी आदि की चर्चा की है।

हिन्दू परम्परा के ग्रन्थ भगवद् गीता में ज्ञान योग, कर्म योग, भक्तियोग और राजयोग के उल्लेख हमें स्पष्ट रूप से मिलते हैं। जैन परम्परा में ज्ञानयोग को सम्यक्ज्ञान के रूप में, कर्मयोग को सम्यक् चारित्र के रूप में, भक्तियोग को सम्यक्दर्शन के रूप में स्वीकार किया गया है। किन्तु जहाँ तक गीता में वर्णित राजयोग का प्रश्न है उसे किसी सीमा तक जैन परम्परा में सम्यक्तप के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। तप में स्वाध्याय, ध्यान व्युत्सर्ग आदि की चर्चा है।

पातञ्जल योगसूत्र में जो अष्टाङ्ग योग की चर्चा है, वह किसी रूप में जैन आगमों में प्राचीन काल से ही उपलब्ध रही है। आचार्य आत्माराम जी ने ''जैन आगम और अष्टाङ्गयोग'' नाम से एक लघु पुस्तिका लिखी थी, उसमें यह बताया है कि जैन परम्परा में ये आठ अंग किस रूप में पाए जाते हैं। यह एक सुस्पष्ट तथ्य है कि जैन परम्परा में जिन पाँच महाव्रतों का उल्लेख है वे ही योग दर्शन में पञ्च यम के रूप में मिलते हैं। इसी प्रकार योगसूत्र में वर्णित पञ्च नियम ही जैन परम्परा में प्रकारान्तर से उपलब्ध हो जाते हैं। जहाँ तक आसनों का प्रश्न है जैन परम्परा में वे ही आसन मान्य रहे हैं जिनके माध्यम से सुखपूर्वक ध्यान किया जा सकता है। जैन आगमों में हठयोग के क्लिष्ट आसनों की तो कोई भी चर्चा नहीं है, किन्तु पद्मासन, गोदुहासन और खड्गासन के उल्लेख विपुल मात्रा में मिलते हैं। प्राणायाम की जो चर्चा है वह हमें जैन आगमों में अल्प ही मिलती है, किन्तु जैन आगमों में श्वासोच्छ्वास को देखने की बात विस्तार से अनेक स्थलों पर उल्लिखित है। जहाँ तक प्रत्याहार का प्रश्न है, इन्द्रिय-निग्रह

एवं संवर के रूप में उसकी विस्तृत चर्चा उत्तराध्ययन आदि अनेक आगमों में मिलती है। जहाँ तक धारणा का प्रश्न है जैन ज्ञान-मीमांसा में उसे प्रत्यक्ष का एक अंग मानकर विवेचित किया है। किसी सीमा तक धारणा को बौद्ध दर्शन के आष्टांगिक आर्य मार्ग में सम्यक् स्मृति के साथ जोड़ा जा सकता है।

ध्यान के सन्दर्भ में जैन आगमों में विस्तृत उल्लेख मिलता है। यहाँ उसकी विस्तृत चर्चा तो सम्भव नहीं है, किन्तु इस लेख में आगे यह बताने का प्रयास किया है कि जैन ध्यान-साधना पर पातञ्जल योगसूत्र के साथ-साथ कौलतन्त्र का भी प्रभाव आया है। पिष्टपेषण के भय से इस चर्चा को यहाँ विराम दे रहे हैं। जहाँ तक समाधि का प्रश्न है वह जैन परम्परा में योग निरोध के रूप में उल्लिखित है और जैन दर्शन के शुक्ल ध्यान के अन्तिम दो चरणों को पातञ्जल योग की समाधि के साथ देखा जा सकता है। इसी सन्दर्भ में यह भी ज्ञातव्य है कि आचार्य हेमचन्द्र के योगशास्त्र का तेरहवाँ अध्याय नाथपंथ से पूर्णतया प्रभावित लगता है। (क्रमशः)

-निदेशक, प्राच्य विद्यापीठ, शाजापुर (म.प्र.)

क्षणिकाएँ

जो करता है
स्व-इन्द्रियों का
संगोपन,
निज कषायों का
वमन,
व सद्गुरु को
नमन,
उसका जीवन
बनता है
मनमोहक, सुन्दर
सुवासित
उपवन।

जब
जीव को
जीते-जी
यह देह
लगने लगेगा
खाक,
तब
समझना
हमारा
चेतन
हो रहा है
पाक।

-यश

शोधालेख

मानव अधिकार के परिप्रेक्ष्य में जैन दर्शन एवं भारतीय संविधान

डॉ. चन्दन बाला (एल.एल.एम., पी.एच.डी.)

प्राकृतिक अधिकारों अथवा मनुष्य के अधिकारों के रूप में जो अवधारणा शताब्दियों से अस्तित्व में थी उसे ही आधुनिक समय एवं विशेष रूप से बीसवीं शताब्दी में 'मानव अधिकार' के नाम से जाना जाने लगा। जैन दर्शन का प्रमुख उद्देश्य तार्किक रूप से उन मार्गों का पता लगाना है जो सभी प्राणियों का कल्याण बिना किसी प्रकार के अलौकिक सहारे के सुनिश्चित कर सके। प्राथमिक रूप से जैन दर्शन का सम्बन्ध व्यक्ति एवं उसकी नैतिकता से है। जैन दर्शन का आधार सही समझ एवं व्यवहार का विषय है। यह किसी अलौकिक के भय में विश्वास नहीं करता। यह तो मानवतावाद का एक प्रकार ही है।

जैन दर्शन सबसे पुरानी विचारधाराओं में से एक है। कई अन्य विचारों की भाँति यह कोई दिव्य अवधारणा नहीं है। बल्कि इसका उद्गम विशुद्ध रूप से मानवीय है। इसका उपदेश उनके द्वारा दिया जाता है, जिन्होंने स्वयं अपने प्रयत्नों से पूर्ण ज्ञान एवं आत्म-नियन्त्रण प्राप्त किया है। ब्रह्माण्ड के रचयिता, रक्षक एवं विनाशक के रूप में ईश्वर की अवधारणा जैन दर्शन में विद्यमान नहीं है। ईश्वर के मानवीय रूप में अवतार लेने का विचार भी जैन दर्शन में स्वीकृत नहीं है।

जैन दर्शन में मानव का हित ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यह इस विश्वास पर आधारित है कि यदि स्वतन्त्रता प्रदान की जाये तो प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के प्रयत्नों द्वारा विकास की क्षमता है। जैनों का मत है कि चाहे कैसी भी परिस्थितियाँ हों व्यक्ति के अधिकारों के प्रति सम्मान को महत्त्व दिया जाना चाहिये। विश्व समुदाय के कल्याण का उद्देश्य रखने वाले इस दर्शन का आधार वैज्ञानिक विचारों पर आधारित मानवीय खोज है। ऋजुता, पवित्रता एवं सत्य के धार्मिक मूल्यों पर आधारित यह दर्शन सदाचार के नैतिक मूल्यों को महत्त्व देता है।

जैन दर्शन, मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा एवं भारत का संविधान

मानव अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा 1948 एवं भारत का संविधान दोनों ही मानव के ऐसे जीवन की कल्पना करते हैं, जिसमें प्रत्येक मानव के जीवन की अन्तर्निहित गरिमा एवं महत्त्व को सम्मान एवं संरक्षण मिले। यहाँ मानवतावाद के लक्ष्यों को अर्जित करने में जैन दर्शन द्वारा अपनाये जाने वाले एवं अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों द्वारा अपनाये जाने वाले मार्ग में क्या साम्य है, इसे निम्नानुसार देखा जा सकता है-

समानता एवं स्वतन्त्रता

जैन दर्शन का अंतिम लक्ष्य मानवता का उद्धार है। मानव की गरिमा को महत्त्व देते हुए यह स्त्रियों एवं पुरुषों के समान अधिकारों में विश्वास करता है। यह मनुष्यों में सहयोग का भाव जगाने, शांति की वृद्धि करने एवं सद्भाव जगाने का कार्य करता है। किसी भी व्यक्ति को यह तुच्छ एवं अवांछनीय नहीं मानता। जैन दर्शन यह मानकर चलता है कि किसी भी व्यक्ति को जाति के आधार पर गर्व नहीं करना चाहिये। विभिन्न व्यक्तियों के व्यवसाय भिन्न-भिन्न होने के कारण उनके क्रिया-कलाप भी भिन्न-भिन्न हैं। हम ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र अपने आचरित कर्मों के कारण हैं। यह दर्शन मानव प्रजाति की एकता को उपधारित करते हुए वर्ग एवं प्रजाति के आधार पर मानवकृत विभेद का विरोध करता है।

समाज के चार वर्णों में सामाजिक समानता स्थापित करना सामाजिक सुधार की दिशा में जैन दर्शन का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 से 19 इसी दर्शन का प्रतिनिधित्व करते हैं। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948 के अनुच्छेद 1 एवं 7 में भी सभी व्यक्तियों के समान एवं स्वतन्त्र रूप से जन्म लेने की बात कही गई है तथा यह भी कहा गया है कि उन्हें परस्पर भ्रातृत्व भाव से व्यवहार करना चाहिये। इसी प्रकार आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1966 अपने अनुच्छेद 2 (2) एवं 3 में तथा नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1966 अपने अनुच्छेद 3 एवं 26 में विधि के समक्ष सभी स्त्रियों व पुरुषों के समान अधिकार का प्रावधान करती है। भारतीय संविधान के उपर्युक्त अनुच्छेदों में भी धर्म, प्रजाति, जाति, लिंग व जन्म स्थान के आधार पर

विभेद निषेध की बात की गई है, लोक नियोजन के क्षेत्र में समान अवसर का प्रावधान किया गया है, सामाजिक न्याय की गारंटी प्रदान की गई है एवं किसी भी प्रकार की अस्पृश्यता के अन्त का प्रावधान किया गया है।

देखा जा सकता है कि मानव अधिकारों के विभिन्न प्रावधान तथा भारतीय संविधान के प्रावधान उसी विचार का समर्थन करते हैं जो जैन दर्शन का आधार है।

वैयक्तिक स्वतन्त्रता मानव अधिकारों में बहुत महत्त्वपूर्ण है। स्वतन्त्र जन्म लेना एवं स्वतन्त्रता का अधिकार इस बात की पूर्वकल्पना करता है कि प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में आचरण की स्वतन्त्रता है। इसी प्रकार का विचार, जैन दर्शन की विभिन्न अवधारणाओं यथा-अहिंसा, अनेकान्तवाद व कर्म के सिद्धान्त में दृष्टिगोचर होता है।

अहिंसा का अर्थ केवल हिंसा नहीं करना ही नहीं है, अपितु इसमें सभी जीवित प्राणियों के प्रति प्रेम का भाव रखना सम्मिलित है। इस अवधारणा के द्वारा जैन धर्म यह उपदेश देता है कि प्रत्येक जीवित प्राणी की अपनी एक गरिमा होती है जिसका सम्मान किया जाना चाहिये। इस सन्दर्भ में अनेकान्तवाद बौद्धिक क्षेत्र में अहिंसा के सिद्धान्त का विस्तार है एवं स्याद्वाद का तार्किक सिद्धान्त सम्भाषण के क्षेत्र तक पहुँचता है। यह दर्शन वास्तविकता की जटिलता का सम्मान करता है। यही कारण है कि यह स्वीकार करता है कि वास्तविकता को कई प्रकार से विवेचित किया जा सकता है। प्रत्येक दृष्टिकोण सत्य होने का दावा करता है, परन्तु यह सत्य नहीं है, क्योंकि यह द्रष्टा की व्यक्तिगत धारणा पर आधारित हो सकता है अतः आंशिक रूप से सही हो सकता है। इसका अर्थ है कि हमें अपने विरोधी के विचार को भी ध्यान में रखना चाहिये एवं वास्तविकता को सही रूप में जानने के लिये अन्य विश्वासों और विचारधाराओं का भी सम्मान करना चाहिये।

अनेकान्तवाद मताग्रही होने एवं एक पक्षीय विचार रखने का निषेध करता है। यह एक बृहत्तर विचार बनाने पर बल देता है।

भारतीय संविधान वैयक्तिक स्वतन्त्रता की बात करता है। अनुच्छेद 19 से 24 व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के विभिन्न पक्षों से व्यवहार करते हैं। सभी के लिये स्वतन्त्रता का अधिकार जैन दर्शन में अहिंसा के समरूप है।

जैन दर्शन में कर्मवाद का सिद्धान्त भी मानव प्राणियों के अधिकारों की सुरक्षा का प्रयत्न करता है। यह इस बात पर आधारित है कि किसी भी कार्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष दोनों ही दृष्टियों से चाहे वह व्यावहारिक हो या नैतिक, यह है कि वह सही है या गलत, अच्छा है या बुरा। इस सिद्धान्त के अनुसार सभी प्राणियों के जीवन का क्रम और भविष्य उनके कर्म से ही निर्धारित होता है। जैन दर्शन यह मानकर चलता है कि यह व्यक्ति का कर्म ही है जो उसके भाग्य एवं आत्मा की यात्रा का विनियमन करता है न कि किसी सर्व शक्तिमान ईश्वर का हस्तक्षेप। भारतीय संविधान का अनुच्छेद 20 जो व्यक्ति को कार्योत्तर विधि से संरक्षण देता है उसमें भी यही दर्शन दृष्टिगोचर होता है। यह अनुच्छेद सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद 11(2) के समरूप है जिसमें व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान किया गया है कि व्यक्ति को उस कार्य के लिये दण्डित नहीं किया जा सकता है जो किये जाने के समय अपराध नहीं था, न ही उससे अधिक दण्ड दिया जा सकता है जो किये जाने के समय उसके लिये नियत था।

धर्म, संस्कृति एवं शिक्षा का अधिकार

जैन दर्शन मानता है कि सत्य के कई रूप होते हैं एवं इसे विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है। अन्य धर्मों की यह आलोचना नहीं करता, न ही यह उनमें दोष ढूंढता हैं। यह तो सार्वभौमिक सहिष्णुता एवं मानवीयता का उपेदश देता है। जैन सिद्धान्त पारस्परिक सहयोग में विश्वास रखते हैं। वे एक ऐसी एकता की कल्पना करते हैं जिसमें प्रत्येक अंग का पृथक् अस्तित्व होते हुए भी वह सम्पूर्ण मानवता के कल्याण के लिये कार्य करता है। जैन दर्शन प्रत्येक प्रजाति, धर्म एवं संस्कृति के पृथक् अस्तित्व के अधिकार में विश्वास करता है, परन्तु उन्हें यह भी समझना चाहिये कि अन्य को भी समान रूप से यह अधिकार प्राप्त है। आत्मविकास के लाभों में जैन-दर्शन का विश्वास है। शिक्षा इसे प्राप्त करने का सर्वोत्तम साधन है। प्रत्येक व्यक्ति का यह मुख्य व्रत है कि वह शिक्षा के माध्यम से अपना विकास करे। यही दर्शन हमें भारतीय संविधान में भी देखने को मिलता है। अनुच्छेद 25 सभी धर्मों की समानता को सुनिश्चित करता है। इसमें व्यक्ति को अन्तरात्मा की स्वतन्त्रता के साथ ही धर्म के प्रचार/व्यवहार एवं प्रसार की स्वतन्त्रता प्राप्त है। यह अनुच्छेद सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद 18 एवं नागरिक तथा राजनैतिक अधिकारों की प्रसंविदा के अनुच्छेद 18 (1) के

समरूप है। धार्मिक व्यवहारों के प्रबन्धन, शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक विश्वासों के थोपे जाने का निषेध, अल्पसंख्यकों के हितों के संरक्षण इत्यादि से सम्बन्धित प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 26,27,28,29,30 में देखे जा सकते हैं। ये सभी अनुच्छेद उसी विचार को प्रतिबिम्बित करते हैं जो जैन दर्शन में निहित है। जैन दर्शन के अनेकान्तवाद का सिद्धान्त कई धार्मिक समस्याओं के समाधान को प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

मानवीय कर्त्तव्य

समाज में शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व के लिये जहाँ अधिकार आवश्यक होते हैं वहीं अन्य व्यक्तियों के अधिकारों के सम्मान का कर्त्तव्य भी होता है। इसीलिए जैन-दर्शन ने गृहस्थों के लिए एक नैतिक संहिता की व्यवस्था की है, जिसे अन्य व्यक्तियों के कर्त्तव्यों के रूप में देखा जा सकता है। अणुव्रत की आचार-संहिता के अनुगामी को पाँच अणुव्रतों की शपथ लेनी पड़ती है एवं प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्त्तव्य है कि वह उन व्रतों का पालन करे एवं समाज में समन्वय तथा भ्रातृत्व भाव को जगाये। यह दर्शन संविधान के अनुच्छेद 51 अ में विद्यमान मौलिक कर्त्तव्यों के समरूप है जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह समाज में लोगों के बीच समन्वय एवं भ्रातृत्व भाव को प्रोत्साहित करे।

उपसंहार

आज समाज में व्यक्ति आत्म केन्द्रित होता जा रहा है। एक वर्ग स्वयं को अन्य से श्रेष्ठतर समझता है। परस्पर संघर्षरत विचारधाराएँ विद्यमान हैं वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास के चलते विश्व को मौत के ढ़ेर पर खड़ा कर दिया गया है। ऐसी स्थिति में जैन दर्शन एक व्यक्ति का विकास चाहता है जो सभी प्रकार की शत्रुताओं एवं पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। जैन दर्शन ने प्रजातीय एवं राष्ट्रीय सीमाओं को समाप्त कर दिया है जिससे विचार में सार्वभौमिकता एवं आचरण में उदारता प्राप्त की जा सकती है। इसका कार्य क्षेत्र कोई राष्ट्र विशेष नहीं, अपितु सम्पूर्ण मानवता है। जैन दर्शन का संदेश आज बहुत अधिक सुसंगत एवं प्रासङ्गिक है। इसमें हमें सहिष्णुता, सन्मार्ग एवं शांति की ओर ले जाने की क्षमता है।

-सह-आचार्य, विधि संकाय, पुराना परिसर,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)

चिन्तन

क्या जैन समाज परिग्रही है?

डॉ. दयानन्द भार्गव

मैं दिल्ली की एक संगोष्ठी में बोल रहा था। मेरा वक्तव्य समाप्त हुआ तो एक श्रोता ने पूछा कि जैन समाज परिग्रही क्यों हैं? इससे पहले कि मैं इसका उत्तर देता, उस संगोष्ठी के अध्यक्ष पद पर विराजमान सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री जैनेन्द्र जी ने कहा कि इस प्रश्न का उत्तर तो किसी जैन को ही देना चाहिये, प्रोफेसर भार्गव से यह प्रश्न नहीं पूछा जाना चाहिये। मेरे उत्तर देने का अवसर ही नहीं आया।

यह बात लगभग तीस वर्ष पुरानी है। किन्तु अभी तीन दिन पहले एक अत्यन्त प्रतिष्ठित तथा अत्यन्त सुशिक्षित जैन ने एक इन्टरव्यू में प्रत्यर्थी से फिर यही प्रश्न पूछ लिया। प्रश्न क्योंकि प्रत्यर्थी से पूछा गया था, अतः इसका उत्तर देने का अवसर इस बार फिर मुझे नहीं मिल सकता। अतः सोचा कि इस प्रश्न का संक्षिप्त उत्तर इस लेख के माध्यम से मैं भी दूँ ताकि इस विषय पर आगे और भी विस्तार से विधिवत् शोध हो सके।

वस्तुतः इस प्रश्न का स्वरूप ही गलत है? प्रश्न यह नहीं होना चाहिये कि जैन परिग्रही क्यों हैं? प्रथम तो प्रश्न यह होना चाहिये कि व्यापारी अमीर क्यों होते हैं? अर्थात् व्यापारी अमीर होते हैं, चाहे वे जैन हों अथवा अजैन। जैनों में भी व्यापारी ही अमीर हैं, नौकरी पेशा नहीं। अजैनों में भी व्यापारी ही अमीर हैं, नौकरी पेशा नहीं। अभिप्राय यह हुआ कि अमीरी की व्याप्ति व्यापार से है न कि जैनत्व से।

अतः व्यापारी अमीर क्यों होता है? इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ना चाहिये। उत्तर यह है कि श्रमिक या नौकरी पेशा कितना ही परिश्रम कितनी भी कुशलता से करे, किन्तु उसकी आय की एक सीमा है। एक चपरासी परिश्रम तथा योग्यता से आई.ए.एस. अफसर बन जाये तो भी उसे सीमित ही वेतन मिलेगा, किन्तु एक व्यापारी की आय की कोई सीमा नहीं है। अतः नौकरीपेशा अरब-खरब-पति नहीं बन सकता, वह अधिक से अधिक उच्चतर आय-वर्ग में ही जा

पायेगा, उच्चतम आय-वर्ग में नहीं। अतः हम उसे अमीर नहीं कह पायेंगे। इसके विपरीत एक व्यापारी अथवा उद्योग करने वाला परिश्रम और योग्यता से भाग्य के अनुकूल होने पर खरबपति भी बन सकता है। वस्तुतः उसकी आय की कोई भी सीमा नहीं है। यह बात जैन-अजैन सभी व्यापारियों पर एक समान लागू होती है।

तब दूसरा प्रश्न यह होता है कि जैन अधिकतर व्यापारी ही क्यों होते हैं? पुरानी भाषा में कहें तो प्रश्न यह होगा कि जैन वैश्य ही क्यों होते हैं, अन्य ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा दलित जाति के लोग जैन क्यों नहीं हैं? इतिहास में देखें तो सभी तीर्थंकर क्षत्रिय हैं। कहा जा सकता है कि उनके अनुयायियों में भी अधिकतर क्षत्रिय रहे होंगे। किन्तु क्षत्रियों का सम्बन्ध युद्ध से रहा है। युद्ध में प्रत्यक्ष हिंसा है और हिंसा जैन परम्परा में सबसे बड़ा पाप माना जाता है। अतः जिसने जैन-धर्म अपनाया, उसने युद्ध का कार्य प्रायः छोड़ दिया। उसे लगा कि आजीविकोपार्जन का सबसे बढ़िया साधन व्यापार ही है। वह व्यापार का कार्य करे और अपने को क्षत्रिय कहता रहे। यह जैन धर्म के अनुकूल नहीं था, क्योंकि जैन धर्म कर्म से ही ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र की व्यवस्था को मानता है। अतः जिस-जिसने व्यापार को अपनाया, उस-उसने अपने को वैश्य ही मान लिया, भले ही वह पहले क्षत्रिय अथवा ब्राह्मण भी क्यों न रहा हो। क्षत्रिय तो हिंसाप्रधान युद्ध से विरत होकर व्यापार में आंये, सम्भवतः ब्राह्मण यान्त्रिक कर्म-काण्ड से ऊब कर आचार-प्रधान जैन धर्म में आये। अनेक जैन आचार्य, ब्राह्मण परम्परा से आये थे। सभी गणधर भी अनुश्रुति के अनुसार ब्राह्मण-परम्परा से आये थे। लगता यह है कि ब्राह्मणों में जिन्होंने जैन धर्म अपनाया, वे प्रायः संन्यस्त ही हो गये। यद्यपि दक्षिण में अभी भी कुछ गृहस्थ ब्राह्मण जैन भी मिलते हैं। उनमें से जिन्होंने व्यापार अपनाया वे ही अमीर हैं, शेष अध्यापन आदि करने वाले न उत्तर में अमीर हैं, न दक्षिण में।

जैन समाज एक शिक्षित समाज है। जैनों के शिक्षित होने का एक कारण साधु समाज है जो प्रायः ज्ञान-चर्चा किया करता है। यद्यपि यह ज्ञान-चर्चा धर्म-प्रधान है तथापि यह चर्चा व्यक्ति को शिक्षित बनने की प्रेरणा देती है। अतः जैन शिक्षित समाज है। उसमें शारीरिक श्रम के द्वारा आज़ीविकोपार्जन

करने वाले बहुत ही कम हैं। सभी थोड़ा बहुत लिखना- पढ़ना जानते हैं, अतः छोटा मोटा व्यापार करना ही उन्हें सुविधाजनक लगता है, मजदूरी करना नहीं। अतः मजदूरी करने वाले वर्ग से जैन समाज नहीं जुड़ पाता है। फलतः श्रमिक जैन नहीं बन पाये।

फिर भी जैनों में गरीब भी हैं। वे धर्म का पालन भी करते हैं। किन्तु वे मञ्च पर नहीं आ पाते। मंच पर तीन प्रकार के लोग आ पाते हैं- 1. साधु सन्त जो पूर्णतः धर्माचरण को समर्पित होने के कारण श्रद्धा के पात्र हैं (इनमें अनेक गरीब परिवारों से भी आये हैं, किन्तु साधु की गरीबी-अमीरी तो देखी नहीं जाती) 2. सेठ-साहूकार जिनका आर्थिक सहयोग सामाजिक कार्य के लिये आवश्यक है तथा 3. विद्वान् (जो प्रायः साधारण आर्थिक स्थिति वाले ही होते हैं) जो धर्म-दर्शन के क्षेत्र में शैक्षणिक कार्य करते हैं। इनमें साधु और विद्वान् तो अमीर नहीं हैं किन्तु सेठ-साहूकार अवश्य अमीर हैं। इन सेठ-साहूकारों को ही जैन-समाज समझ लेना एक भूल है। जैन-समाज तो वह विशाल जन-समुदाय है जो श्रोताओं में बैठा रहता है और जिसे मञ्च पर कभी भी नहीं बुलाया जाता। यही जन-समुदाय वास्तविक जैन समाज और यही बहुसंख्यक भी है तथा यह अमीर भी नहीं है। अतः जैन समाज को अमीर समाज समझ लेना एक गलतफहमी ही है। श्रोताओं में बैठा यह जैन जन समूह भी अधिकतर व्यापारी अवश्य है, किन्तु यह छोटा व्यापारी है न कि अमीर व्यापारी। यह मध्यम आयवर्ग का समाज है। इनमें अनेक गरीब भी हैं।

इस विश्लेषण से जैन समाज की आर्थिक स्थिति तो स्पष्ट होती है, किन्तु जैन परिग्रही क्यों होते हैं? इस प्रश्न का उत्तर अभी नहीं आया। यह प्रश्न उलझन से पैदा हुआ कि हमने अमीरी और परिग्रह का अविनाभावी सम्बन्ध मान लिया है, किन्तु ऐसा है नहीं। परिग्रह का सम्बन्ध मूर्च्छा अर्थात् आसक्ति से है। आसक्ति अमीर में ही हो और गरीब में न हो, ऐसा नियम नहीं है। भागवत की एक कथा में यह स्पष्ट किया गया है कि शुकदेव को अपने साधारण दण्ड कमण्डुल में भी आसक्ति थी और राजा जनक को अपने पूरे साम्राज्य से भी आसक्ति नहीं थी तथापि इस उदाहरण को अनुचित साधन से तथा शोषण द्वारा धन-सञ्चय करके यह कहने का आधार नहीं बना लेना चाहिये कि क्योंकि

हमारी आसक्ति नहीं है, अतः हम परिग्रही नहीं है।

वस्तुतः अपरिग्रह का नियम अकेला नहीं है। उसके साथ अहिंसा भी जुड़ी है जो शोषण का निषेध करती है तथा सत्य और अस्तेय के नियम बेईमानी और चोरी पर नियन्त्रण करते हैं। इस प्रकार ईमानदारी के साथ किसी का हक मारे बिना किया गया धन संग्रह ही नैतिक है। अतः क्रूरता के बिना ईमानदारी से संग्रह किये गये धन के प्रति भी आसक्ति न हो, समग्र दृष्टि से अपरिग्रह का यह स्वरूप बनता है।

इस कसौटी पर कसें तो क्या यह कहा जा सकता है कि जैन अजैनों की अपेक्षा अधिक परिग्रही हैं? प्रश्न यह होना चाहिये कि क्या जैन अजैनों की अपेक्षा अधिक क्रूर हैं, अधिक बेईमान हैं तथा अधिक आसक्ति में डूबे हैं? इन प्रश्नों पर भी विचार करते समय व्यापारी समाज की तुलना व्यापारी समाज से तथा नौकरी पेशा समाज की तुलना नौकरी पेशा समाज से करनी चाहिये। केवल कुछ अरबपति जैनों को देखकर यह कह देना कि जैन परिग्रही ही हैं - उचित नहीं है।

यदि जैन शिक्षा पाकर शोषण पर नियन्त्रण रखते हुए तथा ईमानदारी द्वारा व्यापार का व्यवसाय अपना कर धनोपार्जन करते हैं तो इसमें किसी प्रकार का दोष नहीं माना जाना चाहिये। हाँ, यदि वे इस प्रकार परिश्रम, कार्यकुशलता तथा ईमानदारी से अर्जित धन का उपयोग समाजहित में करें तो यह और भी उत्तम होगा।

अपरिग्रह के तीन पक्ष हैं- आध्यात्मिक पक्ष अनासक्ति का है, नैतिक पक्ष ईमानदारी का है तथा तृतीय पक्ष सामाजिक है। समाज पैसे वालों से समाज-कल्याण के कार्य में मुक्त-हस्त से सहयोग देने की अपेक्षा रखता है। विचार यह करना चाहिये कि जैन समाज इन तीनों दृष्टियों से कितना खरा उतरता है, तभी जैन समाज का सही मूल्यांकन होगा। जैन समाज परिग्रही क्यों है? यह प्रश्न विभज्यवाद द्वारा अनेक प्रश्नों में विभक्त किया जाना चाहिये। यथा-

1. अधिकतर जैन व्यापार का व्यवसाय क्यों करते हैं? क्या जैन जीवन-दृष्टि से व्यापार का व्यवसाय अधिक अनुकूल पड़ता है?

2. व्यापार का व्यवसाय अन्य व्यवसायों की अपेक्षा आर्थिक दृष्टि से अधिक लाभप्रद क्यों है?
3. क्या व्यापार पूर्ण ईमानदारी से किया जा सकता है? अथवा उसमें कर की चोरी जैसी बेईमानी करना अपरिहार्य है?
4. क्या व्यापारी अपने यहाँ नौकरी करने वालों की लाचारी का लाभ उठाकर उनका शोषण करता है?
5. क्या आर्थिक सम्पन्नता का परिग्रह से अविनाभावी सम्बन्ध है? अथवा गरीब भी मूर्च्छावश परिग्रही हो सकता है और अमीर भी कम आसक्ति रख सकता है?
6. आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्ति का समाज को क्या योगदान होना चाहिये?
7. क्या आर्थिक सम्पन्नता व्यक्ति को भोगों में आसक्त बनाने में सहायक है? अथवा भोगासक्ति गरीब में भी हो सकती है और अमीर भी अनासक्त रह सकता है? अपरिग्रह की दृष्टि से यही प्रश्न सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

इसी प्रकार के प्रश्नों के उत्तर से यह स्पष्ट होगा कि जैन समाज अपरिग्रह की दृष्टि से जैन आचार मीमांसा के कितना निकट अथवा कितना दूर है? केवल कुछ अरब-खरबपति जैनों को देखकर जैन समाज को परिग्रही समाज कहना उचित नहीं। यदि इस प्रश्न पर उपर्युक्त बिन्दुओं को लेकर तटस्थ रूप से कोई अनुसन्धान करेगा तो वह समाज की महती सेवा होगी। ('तुलसीप्रज्ञा' से साभार)

-जे-1/7, जीवन-सुरक्षा फ्लेट्स,
पुलिस थाना के सामने, विद्याधर नगर, जयपुर

स्वाति-बूँद

❀ जंजीर चाहे सोने की हो या लोहे की, पर है तो जंजीर ही।
❀ जहाँ देह प्रधान हो वहाँ मनुष्य पशुता के स्तर पर पहुँच जाता है।
❀ मंजिल तक पहुँचना है तो चलना शुरु कीजिए।
❀ अतीत से सीखें, वर्तमान में जीएँ, भविष्य के लिए योजना बनाएँ।
❀ जिज्ञासु की जिज्ञासा के प्रश्न हैं-क्यों, कब, कैसे, कहा?
❀ बच्चों का सा सरल मन हो पर हरकतें बचकानी नहीं हो।

-श्रीमती कंचन सुराणा, सुराणा की बड़ी पोल, नागौर

विशिष्ट प्रश्नोत्तर

दशवैकालिक सूत्र से पायें तात्त्विक बोध (4)

प्रश्न 1. दशवैकालिक सूत्र के अध्ययनों के शीर्षकों के क्या भाव हैं?

उत्तर : दशवैकालिक सूत्र का प्रथम अध्ययन है– *द्रुम पुष्पिका*। द्रुम अर्थात् वृक्ष और पुष्प। जैसे मधुकर के लिए आहार-प्राप्ति के आधार स्वाभाविक रूप से निष्पन्न द्रुम-पुष्प ही हैं, वैसे ही निर्ग्रन्थ भिक्षा जीवी श्रमण के लिए आहार-प्राप्ति का आधार गृहस्थों के घरों में सहज निष्पन्न भोजन होता है। माधुकरी वृत्ति का मूल केन्द्र द्रुम पुष्प है, उसके बिना निर्वाह नहीं हो सकता। इसलिए समग्र माधुकरी वृत्ति का विशिष्ट प्रतिनिधित्व करने वाला शब्द द्रुम पुष्पिका है। इससे यह संकेत मिलता है कि पवित्र आजीविका की प्राप्ति के संकल्प को दृढ़ करना होगा और आजीविका के उपार्जन में व्रतों की शुद्धि को बनाये रखना होगा।

दूसरे अर्थ में द्रुम-पुष्पिका अर्थात् वृक्ष का फूल। जो फूल पेड़ से जुड़ा है उसकी शोभा है। जो फूल वृक्ष से अलग हो गया, वह धूल धूसरित हो गया। उसकी कोई शोभा नहीं है। ठीक इसी प्रकार जो शिष्य प्रभु आज्ञा से, गुरु-शिक्षा से जुड़ा है उसकी शोभा है। जो पतंग कट जाती है, वह बहुत ऊँची चली जाती है। किन्तु उस कटी पंतग की अंत में कोई सत्ता ही नहीं रहती। ठीक इसी प्रकार जो शिष्य स्वच्छंद है, मनमानी करने वाला है, इच्छानुसार प्रवृत्ति करने वाला है, वह बाहर में भले ही सुखी नज़र आ सकता है, उसकी यश-कीर्ति फैल सकती है, जय-जयकार के नारे और भक्तों की भीड़ भले ही जमा हो सकती है, किन्तु वह अपना कल्याण नहीं कर सकता। अंततः उसका पतन निश्चित है। अपने जीवन को सुवासित बनाने के लिए "वसे गुरुकुले णिच्चं", गुरु की आज्ञा में रहना चाहिए। गुरु-आज्ञा श्रेष्ठ कवच है। दशवैकालिक सूत्र 9/2/1 में कहा है-"मूलाओ खंधप्पभओ दुमस्स" अर्थात् वृक्ष के मूल से सर्वप्रथम स्कन्ध उत्पन्न

होता है, तत्पश्चात् स्कन्ध से शाखाएँ और शाखाओं से प्रशाखाएँ निकलती हैं। तदनन्तर उस वृक्ष के पत्र, पुष्प, फल और रस उत्पन्न होता है। इसी प्रकार धर्म का मूल विनय है। गुरु का विनय करने से कीर्ति, श्रुत और मोक्ष की प्राप्ति होती है। अतः पहले अध्ययन के शीर्षक का यही भाव है कि फूल की तरह अपने को वृक्ष से जोड़ दो अर्थात् अपने अस्तित्व को विलीन करके अनन्त से जोड़ दो।

अपने अस्तित्व का विलीनीकरण करना अहिंसा है। अपने आप पर नियन्त्रण करना या आत्मानुशासित बनना संयम है। इच्छाओं से परे हो जाना अर्थात् इच्छा का त्याग कर, आज्ञा-पालन के द्वारा आत्मगत समस्त मलिनताओं को धो डालना है। अहिंसा से साधक विभु (व्यापक) बनता है। संयम से सुरक्षित होता है और तप से आत्म-गुण उज्ज्वल बनते हैं। इस प्रकार व्यापकता, सुरक्षा और उज्ज्वलता धर्म है। गुरु के साथ जुड़ाव रखने से वह मंगलमय और आनन्दमय बनता है। इसके विपरीत अपने अस्तित्व को कायम रखना, नाम के साथ जुड़ाव रखना, सिद्ध से स्वयं को दूर करना है।

द्वितीय अध्ययन है- *'सामण्ण पुव्वयं'* अर्थात् श्रामण्य से पूर्व। श्रामण्य से पूर्व क्या होता है, ऐसी कौनसी साधना है, जिसके बिना श्रामण्य नहीं होता। जैसे- दूध के बिना दही नहीं, तिल के बिना तेल नहीं, बीज के बिना वृक्ष नहीं हो सकता है, वैसे ही काम-निवारण के बिना श्रामण्य नहीं रह सकता। अतः श्रमणत्व की प्राप्ति के पूर्व का उपदेश होने से इस अध्ययन का नाम 'श्रामण्यपूर्वक' रखा गया है। कामना-सहित जो श्रम करे वह श्रमिक तथा कामना रहित जो श्रम करे, वह श्रमण है। लक्ष्य की सिद्धि के लिए किया जाने वाला यत्न, प्रयत्न श्रम है। उस श्रम को जीवन में प्रतिक्षण सँजोते रहना ही श्रामण्य है। जीवन में श्रामण्य से एकरस होने के लिए एक मात्र यही भाव हो कि मैं लक्ष्य को सिद्ध करने के लिए सतत श्रमरत आत्मा हूँ। लक्ष्य को पाने के लिए अपने भीतर के परमात्म स्वरूप से लिपटे हुए मल के दल

को छाँटने के लिए सतत प्रयत्न करते रहना होगा। न थकना होगा, न रुकना होगा और न झुकना होगा। अपने से बद्ध-कर्मों को दूर करने के लिए ही मैं श्रमशील हूँ और यह श्रम ही मेरा जीवन है। जब भोगों में दासता से जीव कराह उठता है और उसे उन भोगों में बंधन का भाव होता है तब वह ऐसा सुख पाना चाहता है, जिसके पीछे दुःख न झाँक रहा हो। ज्ञानियों से सुनकर या कर्मअल्पता से आत्म-भानकर जीव किंचित् अंतर्मुख होता है, और अपने अंतर को टटोलता है कि मुझे यह भोगों का आकर्षण क्यों है? तब उसे साक्षात्कार होता है- पहले विषयेच्छा से, फिर कामेच्छा से। प्रभुवाणी के प्रकाश में साधक समझ लेता है कि ये इच्छाएँ ही मेरे श्रम को तोड़ती हैं, अतः इस अध्ययन के शीर्षक का यही भाव है कि काम-निवारण पूर्वक ही साधक श्रमणत्व को उपलब्ध हो सकता है। अन्यथा नहीं।

तृतीय अध्ययन है- *क्षुल्लकाचार कथा* अर्थात् आचार का संक्षिप्त कथन। आचार की छोटी-छोटी बातें भी उपेक्षणीय नहीं हैं। अपने-अपने स्थान पर प्रत्येक नियम का महत्त्व है। भले ही इन छोटे-छोटे नियमों में कुछ में किसी कारणवश साधक कदाचित् छूट ले लेता है, फिर भी उसके मन में इनको पालने के भाव बने ही रहने चाहिए। ये नियम सुखसाता की वृत्ति पर प्रहार करते हैं, देहासक्ति को क्षीण करते हैं। स्वाद-जय का लाभ करवाते हैं, लोक में रहते हुए लोक-संग में विवेक उत्पन्न करते हैं और आंतरिक कौतुहल भाव को दूर करके महाव्रत के पालन में सहायक बनते हैं। अतः आचार छोटा हो या बड़ा, साधक के लिए उपेक्षणीय नहीं है। इस अध्ययन के शीर्षक का यही भाव है कि जैसे-अग्नि, घाव, कर्ज और कषाय छोटे होने पर भी उपेक्षा के योग्य नहीं होते हैं, यदि उपेक्षा कर दें तो महान् अनर्थ हो जाता है। ठीक इसी प्रकार भगवान् द्वारा उपदिष्ट आचार-धर्म को छोटा समझकर उपेक्षा कर दें तो घोर कर्मों का बंध करके साधक अपना पतन कर देता है।

चतुर्थ अध्ययन है- *छज्जीवणिया* अर्थात् छः प्रकार के जीवों का

समूह। इसका दूसरा नाम इसी अध्ययन में *'धर्म प्रज्ञप्ति'* भी बतलाया गया है। जिसका शाब्दिक अर्थ है। धर्म की विशेष जानकारी। यह नाम पूरे अध्ययन के विषय का सूचन करता है। वस्तुतः आगम में जीव के स्वरूप का वर्णन धर्म की आचरणा के लिए है। अतः जब तक जीव के भेद-प्रभेदों के साथ उनके शस्त्र, शस्त्र-परित्याग और शस्त्र-परित्याग की प्रतिज्ञा का वर्णन न हो तब तक धर्म-शास्त्र की दृष्टि से छज्जीवनिकाय का वर्णन अपूर्ण है। पूर्वकाल में स्थानकवासी परम्परा में श्रावक के द्वारा एक दिन के लिए किये जाने वाले दया-व्रत की संज्ञा छक्काया ही थी। छक्काया में छः काय के आरम्भ के ही त्याग कराये जाते हैं, परन्तु पालन पंचास्रव के त्याग रूप में होता था।

इस प्रकार 'छज्जीवणिया' शब्द व्रत-प्रतिज्ञा का भी सूचक रहा है। इस अध्ययन के शीर्षक का यही भाव है कि साधक इन छः जीव निकायों में छठे निकाय का एक सदस्य है। वह इन जीव निकायों में अतीत में परिभ्रमण करता रहा है और इन्हीं में से किसी एक निकाय में से आया है और यदि वह मुक्त नहीं होता है तो भविष्य में उसे इन्हीं छहों में चक्कर काटना है। किन्तु यदि वह इनके प्रति शस्त्र-प्रयोग से निवृत्त होता है तो इनसे मुक्त होकर अविनाशी अजर अमर पद प्राप्त करता है। यही तो ज्ञानियों के ज्ञान का सार है। इस प्रकार यह छज्जीवणिया अध्ययन धर्म प्रज्ञप्ति रूप है। अर्थात् धर्म को जीवन में उतारने के लिए संदेशरूप है। इसमें छः जीव निकायों का वर्णन, छः व्रतों की प्रतिज्ञा, छः काय जीवों की यतना, काया की छः क्रियाओं में यतना का प्रतिष्ठापन, सूत्र धर्म की तीन श्रवण भूमिकाओं, प्रत्याख्यान, संयम, अनास्रव, तप, व्यवदान और अक्रिया को उनके फल-सिद्धि सहित निरूपित किया गया है। फिर दुर्गति और सुगति में जाने के छह छह बोलों का वर्णन है। इस प्रकार छह की संख्या का अन्त तक निर्वाह है।

(क्रमशः)

तत्त्वज्ञान प्रश्नोत्तरी (क्रमशः 52)

आओ मिलकर ज्ञान बढ़ाएँ

(समुद्घात - 3)

श्री धर्मचन्द जैन

जिज्ञासा– वेदना समुद्घात में जीव पुद्गलों को कितने क्षेत्र में फैलाता है?

समाधान– वेदना समुद्घात में जीव जिन पुद्गलों को अपने शरीर से बाहर निकालता है वे पुद्गल छहों दिशाओं-(पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊँची, नीची) में शरीर प्रमाण लम्बे चौड़े, मोटे क्षेत्र में फैल जाते हैं। ये पुद्गल अन्तर्मुहूर्त तक फैले रहते हैं। ये पुद्गल एक, दो, तीन समय की विग्रहगति से उक्त क्षेत्र को आपूरित एवं स्पृष्ट करते हैं। शरीर प्रमाण क्षेत्र के अलावा अन्य क्षेत्र को ये पुद्गल आपूरित एवं स्पृष्ट नहीं कर पाते हैं।

जिज्ञासा– वेदना समुद्घात का काल जघन्य-उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त ही क्यों माना है?

समाधान– वेदना समुद्घात में जीव ऐसे पुद्गलों को बाहर निकालता है जो जघन्य-उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त तक वेदना उत्पन्न करने में समर्थ है। बाहर फैंके गये वे पुद्गल अन्तर्मुहूर्त में आत्म-प्रदेशों से अलग हो जाते हैं, निर्जरित हो जाते हैं, इसलिए वेदना समुद्घात का काल जघन्य-उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त माना गया है।

जिज्ञासा– पुद्गलों को बाहर निकालने से क्या आशय समझना चाहिए?

समाधान– पुद्गलों को बाहर निकालने से आशय तैजस, कार्मण शरीर सहित आत्मप्रदेशों को बाहर निकालना तथा असाता वेदना आदि समुद्घात रूप पुद्गलों को भी बाहर निकालना समझना चाहिए।

जिज्ञासा– बाहर निकलने वाले पुद्गलों से किनकी विराधना होती है?

समाधान– बाहर निकले हुए पुद्गल वहाँ स्थित प्राण (द्वीन्द्रिय,त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय), भूत (वनस्पति), जीव (पंचेन्द्रिय), सत्त्वों (पृथ्वी, अप्, तैजस, वायु) का हनन करते हैं, उन्हें चक्कर खिलाते हैं,

मूर्च्छित करते हैं और जीवन से रहित करते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि प्राण, भूत, जीव एवं सत्त्वों की विराधना होती है।

जिज्ञासा– वेदना समुद्घात से युक्त जीव को कितनी क्रियाएँ लगती हैं?

समाधान– वेदना समुद्घात से युक्त जीव को कदाचित् तीन, कदाचित् चार और कदाचित् पाँच क्रियाएँ लगती हैं। अर्थात् जब वह किसी जीव को परिताप तथा प्राणातिपात नहीं पहुँचाता है, तब उसे तीन क्रियाएँ (कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी) लगती हैं। जब किसी जीव को परिताप पहुँचाता है, किन्तु प्राणातिपात नहीं करता है तो उसे चार क्रियाएँ लगती हैं। किन्तु जब किन्हीं जीवों का घात (प्राणातिपात) करता है तो उसे पाँचों क्रियाएँ (कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी और प्राणातिपातिकी) लगती हैं।

जिज्ञासा– क्या वेदना समुद्घात के पुद्गलों से स्पृष्ट जीवों को भी क्रियाएँ लगती हैं?

समाधान– हाँ, वेदना समुद्घात के पुद्गलों से स्पृष्ट जीवों को भी क्रियाएँ लगती हैं। जैसे एक पुरुष को बिच्छु, सर्प आदि ने काट लिया, इस कारण उस पुरुष ने वेदना समुद्घात की तो बिच्छु, सर्प आदि को भी वेदना समुद्घात वाले जीवों के समान तीन, चार अथवा पाँच क्रियाएँ लगती हैं। क्योंकि वेदना समुद्घात करने वाला जीव और वेदना समुद्घात के पुद्गलों से स्पृष्ट जीव द्वारा परम्परा से अन्य जीवों की घात होती है।

जिज्ञासा– एक-एक नैरयिक के नैरयिक रूप में अतीत में वेदना समुद्घात कितने हुए हैं?

समाधान– एक-एक नैरयिक के नैरयिक रूप में अतीत में वेदना समुद्घात अनन्त हुए हैं। क्योंकि उसने अनन्त बार नैरयिक पर्याय को प्राप्त किया है। एक-एक नरक भव में कम से कम संख्यात वेदना समुद्घात तो होती ही है। अतः जिन्होंने अनन्त भव कर लिए, उनके अतीत में अनन्त समुद्घात हो ही चुके हैं।

जिज्ञासा– एक-एक नैरयिक के नैरयिक रूप में भविष्य में वेदना समुद्घात कितने होंगे?

समाधान– एक-एक नैरयिक के नैरयिक रूप में वेदना समुद्घात भविष्य में किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। क्योंकि जिस नैरयिक की मृत्यु निकट है, वह कदाचित् वेदना समुद्घात किए बिना ही नरक से निकल कर मनुष्य भव पाकर सिद्ध हो सकता है, तो उस नैरयिक के भविष्य में वेदना समुद्घात नहीं होगा। शेष नैरयिकों के वेदना समुद्घात होता है तो जघन्य एक, दो या तीन होते हैं। यह भी उन जीवों की अपेक्षा समझना चाहिए जिनका थोड़ा आयुष्य बाकी है और बाद के मनुष्य भव में सिद्ध होने वाले हैं। किन्तु उनकी अपेक्षा नहीं समझना चाहिए जो पुनः नरक में उत्पन्न होने वाले हैं।

जिज्ञासा– नैरयिकों में भविष्य में जघन्य एक, दो या तीन असाता वेदना समुद्घात पुनः नरक में उत्पन्न होने वालों में क्यों नहीं समझना चाहिए?

समाधान– क्योंकि नैरयिकों के लिए यह नियम है कि उनमें जघन्य स्थिति का भव मिलने पर भी संख्यात वेदना(समुद्घात) तो होते ही हैं। इस सम्बन्ध में टीकाकार लिखते हैं कि जघन्य स्थिति वाले नरकों में उत्पन्न होने वालों में अवश्य संख्यात वेदना समुद्घात होते हैं, क्योंकि वहाँ वेदना समुद्घात की प्रचुरता है। जैसाकि कहा है-*"नरकेषु जघन्यस्थितिषूत्पन्नस्य नियमतः संख्येया एव वेदना समुद्घाता भवंति, वेदना समुद्घातप्रचुरत्वं नारकाणाम् इति।"*

जिज्ञासा– नैरयिकों में नारकी रूप में वेदना समुद्घात भविष्य में उत्कृष्ट कितना होता है?

समाधान– नैरयिकों में नारकी रूप में वेदना समुद्घात भविष्य में उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात और अनन्त बार होता है। कारण कि जघन्य स्थिति वाले नारक में अनेक बार उत्पन्न होने पर संख्यात वेदना समुद्घात होता है। दीर्घ स्थिति (पल्योपम-सागरोपम) वाले नरकों में एक बार अथवा अनेक बार उत्पन्न होने पर असंख्यात तथा अनन्त बार उत्पन्न होने वाले नैरयिकों में भविष्य में अनन्त वेदना समुद्घात होता है।

-रजिस्ट्रार- अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर(राज.)

चेतन की अन्तर्यात्रा

डॉ. रमेश 'मयंक'

चेतन की अन्तर्यात्रा में
चेतना प्रवहमान होती है
स्वात्म-बोध से
बाहर से भीतर की ओर, पर से स्वयं की ओर
विस्तार से गहराई की ओर, परिधि से केन्द्र की ओर।
चेतन की इस यात्रा में
चिन्ता, चिन्तन और चुनौतियों की
पूर्व दीप्ति के पड़ाव पार करके।
स्वयं का द्रष्टा बन जाना
अन्तस् निरीक्षण की राहों से
स्वयं को बार-बार
समीक्षा की गली से गुजारना
सोने को तपाकर शुद्ध करना है।
मैंने जो कुछ सोचा, कहा और किया
क्या लोगों ने देखा और सराहा?
क्या लोगों ने भी अनुसरण किया?
क्या लोगों ने दूसरों को भी बताया?
और प्रेरित किया - वैसा ही करने को
क्या लोगों का मन प्रसन्न रहा?
यदि हम बन पाए हेतु-
ज्ञान का, कल्याण का, जहान का
सुख का, हंसी का, आनंददायी अभियान का
तो सफल होगी चेतन की अन्तर्यात्रा,
सदैव
सरल, सजीव, सरस, चिन्तन धारा के
सूत्रधारों का अभिनन्दन
ध्यान, साधना के अनुगामी का
बारम्बार शत-शत वन्दन।

- बी-8, मीरा नगर, चितौड़गढ़-312001(राज.)

Tattva bodha

TRANSGRESSIONS OF THE TWELVE *VARTAS* (VOWS)

Dr. Priyadarsna Jain

A. FIVE *ANUVRATAS* OR PRIMARY VOWS

(i) *Ahiṁsā Aṇuvrata* – Partial vow of Non-violence

Transgressions of the first *Ahiṁsāṇuvrata*

TEXT	TRANSLATION
(i) ***Bandhe***	- Captivity and cruelty to animals and to fellow-beings
(ii) ***Vahe***	- Monopoly, dominance and killing
(iii) ***Chavicchee***	- Causing suffering to others, torturing others
(iv) ***Aibhāre***	- Exploitation, over burdening others
(v) ***Bhattapaṇa viccheha***	- Neglecting to nurture animals, plants and fellow- beings

Meaning

Through the first ***Ahiṁsā Aṇuvrata***, a ***Śrāvaka*** vows not to harm, hurt, injure or kill any ***trasa*** creature i.e. mobile beings with two, three, four or five senses. He gives up intentional violence and here too violence towards the one-sensed organisms, sinning culprits, violence in defense etc. is not given up. He neither kills the meek mobile creatures nor asks others to do the same, by thought, word and deed, all his life. The above five transgressions are given up for the practice of this vow. If the above transgressions have been committed then repentance is done through this Sūtra.

Explanation

Ahimsā is the supreme virtue and all other virtues are secondary and are elaborations of this cardinal virtue. The

vow of ***Ahiṁsā*** is all- comprehensive and extolled for the welfare of one and all. The violent acts committed due to carelessness amount to violence and non-violence is a vigilant attitude of the awakened spirit. A householder who has faith in the right Gods, ***Guru***s, and ***Dharma*** and has knowledge of the nine ***tattvas*** exerts in right conduct although partially and the first step towards this begins with the renunciation of intentional violence. A householder aspirant, who seeks self-realization and victory over the self, takes care not to indulge in the above transgression. Inflicting cruelty to animals and human beings, torturing or terrorizing them, physical assaults to animals and humans, consumption of wine and flesh, hunting, deforestation, exploitation, corruption, in human behavior, unfair business practices, attack upon weaker people and nations, child labour, atrocities on women, racial discrimination, ill-treating prisoners, mass violence, suicide etc amount to violation of the ***Ahiṁsā aṇuvrata***.

The need of the hour is protection and preservation of the environment from further degradation and this is possible when every individual, society and nation realizes this and works towards it. And this realization can come through spirituality and faith in the culture of non-violence can enable us to realize the higher truths of life and make life meaningful and the earth a better place to live.

All the other vows of truth, etc are elaborations of this vow of ***Ahiṁsā***. Nothing is higher than Mount Meru and more expansive than the sky. So also know that no ***Dharma*** is equal to ***Ahiṁsā*** in this world. This doctrine of ***Ahiṁsā*** forms the crux of ***Jaina*** ethics and provides a sustainable solution to the spiritual, mental, physical, social and environmental problems faced by modern man.

In olden times there were knives and swords, and only a part of the body was cut, then came the pistols and guns which killed individuals, following this came the atom

bombs which destroyed a city or two, but today man has developed the nuclear bomb and the entire world shudders to think of the use of nuclear bombs and missiles. The problem today is not of guided missiles but misguided men, hence the need is for the ***vrata*** culture and the vow of non-violence. The ***Ācārāṅga Sūtra*** says that there can be one weapon more powerful than the other, but the weapon of self-restraint is the supreme one.

(ii) *Satya Aṅuvrata*- Partial vow of Truth

Transgressions of the second *Mṛṣāvāda-Viramaṇāṇuvrata*

TEXT	TRANSLATION
(I) ***Sahassabbhakkhāṇe***	- Telling lies
(ii) ***Rahassabbhakkhāṇe***	- Divulging the secrets of others
(iii) ***Sadāraṁantabhee/sap-aimantabhee***	- Divulging the secrets of one's spouse
(iv) ***Mosovaese***	- Giving false advice, mis-guiding, mis-management
(v) ***Kūdalehakaraṇe***	- Forgery

Meaning

Through this vow the ***Jaina*** laity vows to give up gross untruth, i.e. he shall not utter that untruth and indulge in false practices, which are illegal and cause distrust. He desists from falsehood and false utterances motivated by passions, greed, fear or laughter by thought, word and deed. He neither takes to falsehood nor does he advise others to do the same. The five transgressions of this vow are as mentioned above. If the above transgressions are knowingly or unknowingly committed then the aspirant expiates for the same and prays that this sin of his become fruitless.

Explanation

This vow of ***Satya*** is a solution to the growing distrust among individuals, societies and nations. It is said that "Truth is God" (***Saccaṁ Khu Bhagavaṁ***). By being truthful to oneself one comes closer to God and Godhood. ***Satya***

signifies much more than honesty, it implies right, true and meaningful living. Knowing one-self as one truly is and others in the same light enables one to practice non-violence as well as truthfulness. As Geetha Ramanujam remarks, "It implies that by being true to oneself, not being hypocritical, cunning and deceitful, one is true to reality. Denying the existing of a fact, assertion of something that does not exist, revealing something different from what actually it is, condemnable, sinful and disagreeable speech, all amount to violation of this vow. Misguiding the weaker people and nations and mismanagement of funds at all levels, false preaching, advices and guide lines, instigating crimes, gossiping, forgery, breach of trust, involvement in scams and corrupt practices, etc. amount to transgressions of this vow in modern times."

As she further says, " The vow of ***Satya*** amounts to being true to oneself, fellow beings and the environment at last. It implies that all our activities are directed by right faith, right knowledge, and right conduct which in turn mean that one should be free from anger, greed, cowardice, fearfulness, jest and blame. ***Aticāras*** i.e. transgressions have to be not only understood but also overcome. ***Aticāras*** are closely related to the ***karma*** theory because avoiding these transgressions not only results in a pure environment, but also redeems man of his ***Karma***.

So ***Satya*** should be viewed as a social discipline practised at the individual level, which benefits the society morally and elevates the individual spiritually. Otherwise, man invites ***karma*** for himself and ultimately he suffers."

(iii) *Asteya Aṇuvrata* – Partial vow of Non-stealing.

Transgressions of the third *Adattādāna - Virmaṇāṇuvrata*

TEXT	TRANSLATION
(i) ***Tenāhade***	- Receiving or aspiring for stolen property
(ii) ***Takkarappoge***	- Instigating theft or criminal

activity

(iii) ***Viruddharajjāikkamme*** - Illegal and corrupt practices

(iv) ***Kūdatullakūdamāṇe*** - Manipulation of weights

(v) ***Tappadirūvagavavahāre*** - Adulteration

Meaning

Through this vow the laity vows to refrain from theft in all forms through two ***karaṇas*** and three ***yogas***, all his life. Practice of the vow includes desisting from taking away property or any other thing, which is not given to us. This is a gross vow and the transgressions as mentioned above if violated then the aspirant expiates for the same through this ***sūtra***.

Explanation

Acaurya, ***Asteya*** or non-stealing is a solution to corruption, false practices taking place at all levels, exploitation of natural resources, global warming etc. When we take or rob things that are not given to us it is theft. Greed, desire, liking is the root cause of theft and exploitation. The more we get the more we want. Greed increases with every gain, desire is endless as space, hence to conquer greed it is important to develop contentment and thus check greed through the practice of this vow. When one vows not to steal, he assures himself that he will not be stolen and cheated. When one is determined not to steal it is understood that he will not commit any act that is illegal, irrational and illegitimate for which he will be punished by law; in case he escapes the law there is no chance that he will escape the law of ***karma***. "As you sow, so you reap" is the universal law of ***karma*** which operates on all beings be it micro or macro, human or animal, plants or birds. The spiritual and social significance of this vow is un-debated. To pursue the spiritual quest it is important to be ethical first. Let us see some of the forms of the transgressions of this vow in modern times: Instigating crime or theft, harboring terrorists, allowing bandits and culprits to roam free, receiving or aspiring for

stolen property, receiving unlawful commissions for transactions and unlawful or illicit deals, giving and taking kickbacks, illegal trade, corruption, bribery, dowry, adulteration, flesh trade, use of false weights and measures, substitution of inferior commodities, decoity, robbery, smuggling, black marketing, etc all these amount to transgressions of this vow.

If the above vow is practised by thought, word and deed then one saves himself from committing these transgressions and is on the path of redemption. A person whose conscience is clear and a person who is true to it fears sin and those whose conscience is not clear they may fear the fruit of sin, but still do not give up the sinful path. If man does not check his inhumane behavior then nature will take steps to restore the balance and so before it is too late we ought to take an about-turn from violence to non-violence, from untruth to truth, from exploitation to contentment and save ourselves from robbing our progeny of their right to the natural resources.

(Continue..)

-Lecturer, Dept. of Jainology, University of Madras, Chennai

बाल-स्तम्भ [सितम्बर-2009] का परिणाम

जिनवाणी के सितम्बर-2009 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'करकंडु मुनि' कहानी के प्रश्नों के उत्तर 14 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए, उनमें से प्रतियोगिता के विजेता इस प्रकार हैं। पूर्णांक 25 में से दिये गये हैं-

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-250/-	दीक्षा छोटिया-मालेगाँव	24.5
द्वितीय पुरस्कार-200/-	अर्पित जैन-जोधपुर	24.5
तृतीय पुरस्कार- 150/-	रूपमाला छाजेड़-समदड़ी	24
सान्त्वना पुरस्कार- 100/-	निशि सिंघवी-बदनावर	23.5
	श्वेता आंचलिया-धुलिया	23.5
	संदीप छाजेड़-समदड़ी	23.5
	दीपिका नाहर-यवतमाल	23
	सौरभ भंडारी-पीपाड़ शहर	22

संस्मरण

अचित्त पानी का स्थानक

डॉ. दिलीप धींग

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर की ओर से वर्ष-2009 में स्वाध्यायी के रूप में पर्युषणकालीन सेवाएँ देने के लिए शाजापुर गया। मध्यप्रदेश का यह जिला जैन धर्म के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ. सागरमल जैन का गृहनगर है। शाजापुर में प्राच्य विद्यापीठ की स्थापना करके डॉ. जैन ने अपने नगर को अनुपम उपहार दिया है।

शाजापुर के जैन समाज के साथ अनेक प्रेरक बातें/चीजें जुड़ी हुई हैं, उनमें एक चीज़ वहाँ उल्लेखनीय लगी, वह है- अचित्त (धोवन) पानी वाला स्थानक। कसेरा बाजार स्थित वह जैन स्थानक लगभग पौने दो सौ वर्ष पुराना है। स्थानीय श्रावक-श्राविकाओं ने बताया कि नींव से लेकर पूरा स्थानक बनने तक अचित्त पानी का ही उपयोग किया गया था।

संयोग यह बना था कि स्थानक भूमि के पास ही एक रंगरेज रहता था। कपड़े रंगने का उसका बड़ा कारोबार था। अपने व्यवसाय के निमित्त से उसे बहुत परिमाण में पानी विसर्जित करना होता था। जब स्थानक-निर्माण का कार्य शुरू हुआ तो विवेकशील श्रावकों ने उस रंगरेज से कहा कि वह उपयोग किया हुआ पानी फेंकने की बजाय उन्हें दे दे। रंगरेज इस सुझाव पर प्रसन्नता से सहमत हो गया। रंगरेज द्वारा उपयोग कर लिए गए पानी को संग्रह करने के लिए कोठियों आदि की व्यवस्था कर ली गई। प्रतिदिन रंगरेज द्वारा फेंकने योग्य पानी को स्थानक निर्माणकर्ताओं द्वारा ले लिया जाता।

इस प्रकार आरंभ से लेकर अंत तक पूरे स्थानक के निर्माण में रंगरेज द्वारा उसके व्यवसाय के निमित्त से तैयार अचित्त पानी का ही उपयोग किया गया। बोलचाल में उस स्थानक को आज भी 'धोवन (अचित्त) पानी वाला स्थानक' कहा जाता है। इस स्थानक में समय-समय पर अनेक साधु-साध्वियों के वर्षावास, प्रवास और स्थिरवास हो चुके हैं। स्थानकवासी जैन परम्परा के प्रसिद्ध सन्त कवि तिलोकऋषि जी का भी वहाँ प्रवास हुआ था। आचार्य आनन्दऋषि जी का, आचार्य बनने के बाद पहला चातुर्मास इसी स्थानक में हुआ था। यह स्थानक साताकारी और ऊर्जा से भरा है। यहाँ प्रतिदिन धर्माराधना होती है।

-बम्बोरा-313706, जिला-उदयपुर (राज.)

धारावाहिक (1)

धरोहर

श्रीमती पारसकंवर भण्डारी

किसी की धरोहर दबाने से कैसा दुष्फल मिलता है, पढ़िये इस कहानी में। इसमें गाँव का नाम, पात्रों के नाम आदि सब कल्पित हैं।

कौशाम्बी नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। वह प्रजावत्सल एवं राजा के सभी गुणों से युक्त था। उसी शहर में एक व्यापारी सेठ रहता था, जिसका नाम धर्मदास था। वह सेठ मिलनसार तथा मधुर स्वभाव वाला, कुशल व्यापारी था। सेठ धर्मदास के पाँच पुत्र थे जो सुन्दर एवं विनयवान थे।

गुणचन्द्र नाम का एक व्यक्ति उसी शहर में रहता था, उसने सोचा मुझको तीर्थयात्रा पर जाना है, पर मेरे पास रत्नों की पोटली पड़ी है उसे मैं किसे सौंप कर जाऊँ? बहुत से व्यापारियों के नाम याद आए, पर मन में सन्तुष्टि नहीं हुई। सोचते-सोचते सेठ धर्मदास का नाम मस्तिष्क पटल पर उभरा। यह सेठ उचित रहेगा, इस सेठ की बहुत प्रशंसा सुनी है। यह ईमानदार है, मुझे धोखा नहीं देगा। इस प्रकार विचार करके वह रत्नों की पोटली हाथ में लेकर सेठ धर्मदास की दुकान पर पहुँच गया। उसने सेठ साहब से कहा- सेठजी! मैं तीर्थयात्रा पर जा रहा हूँ, इसलिए कीमती वस्तुएँ घर में नहीं रख सकता, और न ही साथ ले जा सकता हूँ। अतः मैं आपके पास आया हूँ, मेरे पास एक पोटली है, जिसमें बहुमूल्य रत्न हैं, कृपा करके आप अपने पास रख लीजिए। मैं वापिस आने के बाद आपसे ले लूँगा।

उस समय सेठजी दुकान में अकेले ही थे। सेठजी ने मना करते हुए कहा- मैं किसी का माल (धन) नहीं रखता। आप कहीं अन्य व्यापारी के पास जाकर रख दीजिए। उस व्यक्ति ने कहा- "सेठजी! आपका नाम मैं सुन चुका हुँ, आप बड़े ईमानदार हैं, आप किसी की धरोहर नहीं रखते हैं, किन्तु मैं गरीब आदमी किसका भरोसा करूँ?" मेहरबानी करके मेरी यह पोटली अमानत के रूप में आपको रखनी ही होगी। इस प्रकार वह हाथ

जोड़कर मन्नतें करने लगा। तब सेठजी ने कहा- देखो भाई! ऐसे तो मैं किसी की भी अमानत नहीं रखता। पर तुम इतना आग्रह कर रहे हो तो, तुम अपने हाथों से अन्दर कमरे में जहाँ मन हो वहाँ रख दो। मैं तो दूसरों की वस्तु को हाथ नहीं लगाता। यात्रा से वापस आओ तब जहाँ पर तुमने रखी है वहाँ से ले लेना। गुणचन्द्र खुश हो गया और अपने हाथों से रत्नों की पोटली को अन्दर कमरे में रख दिया। सेठजी को धन्यवाद देता हुआ, खुशी-खुशी वहाँ से रवाना हुआ।

दो चार दिन बाद सेठ धर्मदासजी के मन में आया कि देखूँ तो सही कि उस पोटली में कितने और किस प्रकार के रत्न हैं? एक बार तो विचारों ने पलटा खाया कि नहीं, मुझे पराई अमानत को हाथ भी नहीं लगाना चाहिए, किन्तु मन चंचल है, वह मचल जाता है तो लाख कोशिश करो, तब भी वह नहीं मानता। यही हालत सेठजी की हो रही थी, रत्नों को देखने की लालसा बढ़ती गई।

ज्ञानीजन फरमाते हैं कि लोभ का भूत सिर पर चढ़ जाता है तो वह वापिस शीघ्र उतरने का नाम ही नहीं लेता। अब सेठजी मन के वशीभूत हो गये, और पहुँच गये कमरे के अन्दर। कहीं कोई आ नहीं जाए, इस डर से दरवाजा बन्द कर लिया। निश्चिन्त होकर पोटली उठाई और खोलने लगे, रत्नों की चमक से आँखे चुंधिया गई, उसमें बहुमूल्य पाँच रत्न थे। सेठजी को आश्चर्य हो रहा था कि अपने को गरीब बताने वाले व्यक्ति के पास इतने कीमती रत्न? अब सेठजी के मन में लोभ जगा कि, ये रत्न तो मैं रखूँगा। किसी को कानोकान खबर नहीं पड़ेगी। कहते हैं कि "लोभ पापों का बाप होता है।" सेठजी ने रत्नों को तिजोरी में रख दिया। सेठजी के चेहरे पर खुशियाँ झलकने लगीं, एकाएक मालामाल जो हो गये। घरवालों को भी इसकी भनक नहीं पड़ने दी।

इधर वह गुणचन्द्र तीन-चार माह के पश्चात् तीर्थयात्रा से वापस आया तो सेठजी की दुकान पर जाकर उसने अपने रत्नों की पोटली मांगी। उस समय सेठजी की दुकान पर उनके मित्रगण तथा मुनीम गुमाश्ते भी विद्यमान थे। उन्होंने यह शब्द सुने तो सब हक्के-बक्के हो गये और सोचने लगे, कि इस आदमी को पहले कभी नहीं देखा, फिर यह कौनसी पोटली

मांग रहा है। इतने में सेठजी तड़क कर बोले कि कौनसी पोटली और कौनसे रत्न? मैं तो पहली बार तुम्हें देख रहा हूँ। कहीं भूल से तुम दूसरी दुकान पर चले आये हो। तब गुणचन्द्र ने कहा-"सेठजी आप याद करिए, मैं तीर्थयात्रा करने जा रहा था, तब मेरी अमानत आप को सौंप कर गया था। आपने पहले तो मना कर दिया, पर बाद में मेरे बहुत कहने पर आपने मुझसे कहा- "तुम अपने हाथ से ही इसे रख दो, मैं हाथ नहीं लगाऊँगा। याद करिये सेठजी!" सेठजी गुस्से से तिलमिला उठे, हमारे ऊपर आरोप लगा रहा है। ऐसा ही है तो जाकर ले ले जहाँ रखी हो। वह अन्दर गया। जहाँ वह पोटली रखी थी, वहाँ ढूँढा, पर पोटली तो गायब थी। अब क्या करे, वह कहने लगा- "मैंने यहीं रखी थी।" अब सेठजी का पारा आसमान पर चढ़ गया- "यहीं रखी थी तो क्या ज़मीन खा गई, या हम खा गये? तू झूठा है, रत्नों के बहाने हमें ठगने आया है। "सेठजी! मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ, मेरे बहुत कीमती रत्न थे, मेरी जीवन भर की कमाई थी। आप मेरी अमानत लौटा दीजिए।"

अब सेठजी के साथ-साथ मुनीम गुमाश्ते भी उसे दुत्कारने लगे, ठग कहीं का ? कभी अपने जिन्दगी में रत्नों को देखा है? कैसे होते हैं? कभी शक्ल देखी अपनी? गंवार कहीं का आया है रत्न मांगने। सब धक्के मारकर उसे बाहर निकालने लगे और वह रोता हुआ रत्नों की रट लगाये जा रहा था। हो हल्ला सुन कर आस-पास की दुकान वाले भी इक्कठे हो गये और पूछने लगे कि क्या हुआ? अरे! यह ठग है, हमें ठगने आया है। यह कहता है कि मेरी अमानत लौटा दो। अब आप ही बताओ कि मैं किसी की धरोहर रखता हूँ क्या? सो मैं इसकी रखूँगा? मुझे बदनाम करने आया है। सब लोगों ने मिलकर उसको मारा पीटा एवं धक्का देकर बाहर निकाल दिया। अब बिचारा क्या करता? दिमाग पर ऐसा झटका लगा कि वह पागल हो गया। मेरे रत्न, मेरे रत्न की रट लगाता हुआ गली-गली घूमने लगा। रत्नों की आसक्ति के कारण वह मरकर सांप की योनि में उत्पन्न हुआ। कहते हैं कि- लोभ का थोभ नहीं। धरोहर भी हड़प गये और सबके सामने हरिश्चन्द्र भी बन गये। बलवान के आगे कमजोर हार ही जाता है। बिचारा गुणचन्द्र! धन के पीछे अपनी जान गंवा दी। (क्रमशः)

नारी-स्तम्भ

स्वार्थ से परमार्थ की ओर

श्रीमती विमला जोटा

सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर पायेंगें कि संसार का प्रत्येक प्राणी बिना प्रयोजन के कोई भी कार्य नहीं करता है। प्रत्येक कार्य के पीछे कोई न कोई प्रयोजन अवश्य रहता है। एक छोटी सी चींटी भी मुँह में मिट्टी दबाकर चलती है और अन्त में जाकर अपना घर बना ही लेती है। इसमें उसका विवेक कार्य करता है। पक्षी एक-एक तिनका जोड़कर सुन्दर घोंसला बनाता है। सरिता बहती रहती है और सागर में मिलकर सागर का रूप धारण कर लेती है। कलियाँ खिलकर धरती का शृंगार करती हैं और प्रसून वातावरण को सौरभमय बनाते हैं। बादल सागर से खारा पानी लेकर जगत् को मीठा जल देता है। वृक्ष अपने फलों को स्वयं न खाकर हमें खिलाते हैं और प्राणवायु देकर हमें जीवनदान देते हैं। सरोवर स्वयं अपना जल नहीं पीता है, अपितु हमारी प्यास बुझाता है।

रहीमदास जी ने ठीक ही कहा है-

"तरुवर फल न खात है, सरवर पीये नहीं पान।
रहिमन परकाज हित संपत्ति संचहि सुजान॥

इस तरह हम देखते हैं कि सारी प्रकृति परमार्थ का ही कार्य करती है, इसमें कोई न कोई प्रयोजन अवश्य रहता है।

स्वार्थ, परार्थ एवं परमार्थ की दृष्टि से प्रयोजन के तीन प्रकार हैं-

स्वार्थ का प्रयोजनः- मात्र अपने ही स्वार्थ के लिये कार्य करना, अपने ही स्वार्थ को सिद्ध करना, स्वार्थ का प्रयोजन है। यह स्वार्थ का मोह है जो व्यक्ति अपना ही हित चाहता है। दूसरों का अहित करके भी अपने ही स्वार्थ सिद्धि की ओर दत्तचित्त रहता है, परहित की कुछ चिन्ता नहीं करता है।

आज संसार की ओर दृष्टिपात करें तो हमें अत्यन्त खेद के साथ

कहना पड़ेगा कि जगत का सबसे विकसित प्राणी मानव है, फिर भी वह प्रायः स्वार्थ में ही जी रहा है। अपने सुख के लिए वह दूसरों को दुःख देने में कतराता नहीं है। कितनी क्रूर हत्याएँ, घोर अपराध, कितना खून खराबा, कितने बलात्कार, कितने अत्याचार समाचार पत्रों में पढ़ते हैं। यह सब अपने स्वार्थ के लिये, अपनी सुख-सुविधा के लिये, अपनी खुशियों के लिये किये जाते हैं। अगर मनुष्य अपने स्वार्थ में विवेक रखे, **"मैं भी जीऊँ और तुम भी जीओ"**, **"जीओ और जीने दो"** वाला सिद्धान्त अपनाए तो यह धरती स्वर्ग बन सकती है। किन्तु यहाँ दुःख अधिक एवं सुख कम है- **इस नील विषाद गगन में, सुख चपल सा दुःख घन में।** कहीं-कहीं तो नारकीय जीवन दिखाई देता है। इसके पीछे मानव की संवेदनशीलता की कमी, विवेक और करुणा की कमी है। उसमें सुख देने की नहीं स्वयं बटोरने की भावना बढ़ती जा रही है। अर्पण और समर्पण का तो नामो निशान नहीं, फिर सुख पायेगें कैसे, सुख तो समर्पण में है, स्वार्थ में नहीं है। अपेक्षा रखते-रखते जब उसकी उपेक्षा होती है तब रोता-चिल्लाता है, फरियाद करता है, शिकवे-शिकायत करता है। इन सबके पीछे स्वार्थ की प्रबलता कारण है।

सम्प्रति पिता-पुत्र, भाई-भाई, सास-बहू, देवरानी-जेठानी, गुरु-शिष्य आदि के सम्बन्धों में मृदुता और व्यवहार में शिष्टता की बहुत कमी होती जा रही है। बुजुर्गों के प्रति आदर-भाव एवं छोटों के प्रति स्नेह कम होता जा रहा है। केवल 'मैं' और 'मेरे' की भावना पनप रही है और इसी भावना ने मानव को दानव बना दिया है। हमारी चेतना जो ऊर्ध्वमुखी बननी चाहिए, वह अधोमुखी बनती जा रही है। हृदय भी संकुचित होता जा रहा है। उदार दृष्टि की जगह संकुचित दृष्टि पनप रही है। इसी कटुता के कारण परिवार टूटते जा रहे हैं। संतुलित और सम्यक् व्यवहार समाप्त हो रहा है। परस्पर एकत्व नहीं है। सासू घर का सारा काम बहू पर, और बहू सासू पर सारा काम छोड़ दे तो यह स्वार्थ का सम्बन्ध है, हमें मिलकर सभी कार्य करने चाहिये।

परार्थ प्रयोजनः- प्रत्येक व्यवहार के साथ विवेक आवश्यक है, नहीं तो

वह स्वार्थ का मोह बन जायेगा, जो मूढता और विक्षिप्तता को बढ़ायेगा। परार्थ प्रयोजन सुखद होता है। वह स्वयं की समस्या को सुलझाने के साथ दूसरों की समस्या को सुलझाता है।

मधुबन खुशबू देता है, सागर सावन देता है।
जीना उसका जीना है, जो औरों को जीवन देता है।।

वास्तविक जीना तो दूसरों को जीवन देना है। वही जीवन हमें आनन्द की अनुभूति देता है। तुच्छ वृत्ति से जीवन संकुचित ही बनता है। कितनी बार हम देखते हैं कि लोग यात्रा करते हैं, तब चाहे बस हो या रेलगाड़ी, पसर कर बैठते हैं, दूसरों को जगह नहीं देते हैं, यहाँ तक कि वृद्ध और बीमार को भी जगह नहीं देते हैं, ऐसा लगता है कि करुणा तो बिल्कुल सूख गई है। ऐसी तुच्छ वृत्ति को धिक्कारने का मन करता है।

धार्मिक पर्वों पर स्वामि-वात्सल्य होता है, उसमें कितने ही लोग पहिले अपनी थाली भर लेते हैं, चाहे आवश्यकता हो या न हो, चाहे जूठन छोड़ेंगे, लेकिन दूसरों का ध्यान नहीं रखेंगे। मेरी सबसे नम्र प्रार्थना है कि मेहरबानी करके सामूहिक भोजन के दिन जूठन न छोड़ें, सम्भव हो तो ऊनोदरी तप अवश्य करें, सबको भोजन बराबर मिले इस बात का अवश्य ध्यान रखें। इससे समाज में शिष्टता और व्यवस्था बनी रहेगी।

मालिक कर्मचारी की समस्या को समझें। जो दीन-दुःखी हैं, भोले-निर्भीक प्राणी हैं, उनके प्रति करुणा और संवेदना रखें, दया घट-घट में व्यापक हो।

दीन क्रूर ने धर्म विहोणा देखी दिलमां दर्द बहे।
करुणा भीनी आँखों मां थी, अश्रुनो शुभ स्रोत बहे।।

गाय को दाना-पानी नहीं दिया और दूध निकालते रहे तो गाय शीघ्र मर जायेगी। इसलिये करुणा भावना को विकसित करना अति आवश्यक है। भगवान् महावीर की करुणा आज जगत् प्रसिद्ध है। इसी भावना से महावीर ने कितने ही जीवों का उद्धार किया।

समाज में सामाजिक प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिये फूँक-फूँक कर कदम रखना चाहिये। केवल दिखावटीपन और आडम्बर नहीं करना

चाहिये। व्यक्ति के मन में समाज के प्रति कर्तव्य की भावना, आदर की भावना, निष्काम सेवा की भावना, शिष्टता और प्रेम की भावना, परस्पर हित की भावना कूट-कूट कर भरी होनी चाहिये।

संसार के सभी प्राणी सुखी रहें, यह भावना बार-बार करनी चाहिये -

सुखी रहें सब जीव जगत के, कोई कभी न घबरावे।
वैर पाप अभिमान छोड़ जग, नित्य नये मंगल गावे॥

तिन्नाणं-तारयाणं वाला सिद्धान्त बना रहे, इस भव-सागर से मैं भी तिरू और दूसरे भी तिरें। इस परार्थ भावना को विकसित करते रहेंगे तो हम आनन्द का लाभ उठा सकेंगे।

प्रत्येक व्यक्ति अगर पर-हितों को ध्यान में रखते हुए जीवन व्यतीत करेगा, पर की सेवा-परोपकार आदि सभी शुभकार्य निष्काम भाव से करेगा तो हम निश्चित यह कह सकते हैं कि हमारे परिवार, समाज, देश और विश्व का अवश्य कल्याण होगा, धरा पर स्वर्ग उतर आयेगा।

परमार्थ का प्रयोजनः- स्वार्थ एवं परार्थ से बढ़कर है परमार्थ का प्रयोजन। यह आत्मिक कल्याण से जुड़ा हुआ है। अपने दोषों एवं बुराइयों पर पैनी नज़र रखते हुए उन्हें छोड़ने के लिए तत्परता ही परमार्थ प्रयोजन है। यह आध्यात्मिक विकास का द्योतक है। इसमें भौतिक वस्तुओं से स्वार्थ की पूर्ति में कोई आकर्षण नहीं रहता तथा परहित एवं स्वहित के सही स्वरूप को समझकर व्यक्ति आत्मिक-विकास के पथ पर बढ़ता है। परमार्थ में संलग्न व्यक्ति कभी दूसरों का अहित नहीं करता, वह दूसरों का अहित करने का भाव मन में भी नहीं लाता। जीवन का उत्कृष्ट प्रयोजन तो यही है।

-जे-1, पाम स्प्रिंग, कफ परेड़, मुम्बई-400005 (महा.)

इच्छा पर जितना ही साधक का नियन्त्रण होगा, उतना ही उसका व्रत दीप्तिमान होगा। इच्छा की लम्बी-चौड़ी बाढ़ पर नियन्त्रण नहीं किया गया, तो उसके प्रसार में ज्ञान, विवेक आदि सद्गुण प्रवाह में पतित तिनके की तरह बह जायेंगें। -आचार्य हस्ती

युवा-स्तम्भ

कठिन नहीं प्रतिक्रमण का कंठस्थीकरण

श्री नवनीत मेहता

ब्यावर के ज्योतिर्विद स्व. श्री बालचन्द जी मेहता के प्रपौत्र श्री नवनीत मेहता सुपुत्र श्री निर्मल जी मेहता ने 25 वर्ष की युवावय में चार दिनों में सम्पूर्ण प्रतिक्रमण कण्ठस्थ कर एक रेकार्ड कायम किया है। श्री नवनीत मेहता की भावाभिव्यक्ति को श्री सम्पतराजजी चौधरी, दिल्ली ने शब्दों में सम्पादित किया है। -सम्पादक

मेरी वय पच्चीस साल की है, परन्तु अभी तक संत-सतियों के सान्निध्य का कोई विशेष संयोग मेरे जीवन में नहीं रहा था। सन् 2009 का चातुर्मास ब्यावर शहर में पूज्य उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. का होना निश्चित हुआ तो मन ही मन एक जिज्ञासा जगी कि इस बार मुझे भी संतों के संसर्ग में आना चाहिए एवं उनके वंदन, प्रवचन का लाभ लेना चाहिये। मेरी इसी जिज्ञासा की पूर्ति हेतु, चातुर्मास के प्रारम्भ से ही मैं नियमित रूप से संतों के प्रवचन में जाने लगा। संतों के प्रवचनों से मुझमें धर्म को समझने का आकर्षण बढ़ने लगा। मेरे अल्पज्ञ मन में कई तरह की जिज्ञासाएँ उठने लगीं। उनका समाधन पाने मैं सायंकालीन प्रतिक्रमण के पश्चात् संतों के पास जाने लगा। प्रवचन सुनने के बाद मेरे मन में उठे प्रश्नों को ज्ञान-चर्चा के दौरान मैं श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. से निवेदन करता एवं वे मेरी समझ में आने वाली शब्दावली में मुझे उसका समाधान देते। इसी ज्ञान-चर्चा के साथ महाराज साहब की सामायिक एवं स्वाध्याय करने की सतत प्रेरणा रहती थी। उन्होंने मुझे सामायिक के पाठ याद करने को कहा। मैंने सहज रूप से दूसरे ही दिन सामायिक सूत्र के तीन पाठ याद कर उन्हें सुना दिये।

मेरी लगन से सम्भवतः महाराज साहब प्रभावित हुए। उन्होंने फरमाया कि सामायिक में हम निश्चित काल के लिए स्थिर होकर प्रभु स्मरण करते हैं उनका गुणगान करते हैं एवं स्वाध्याय के रूप में धार्मिक पुस्तकों का पठन-

पाठन करते हैं, जिससे शरीर से एवं मन से हम पापकारी कार्यों से अलग हो जाते हैं। यह धर्म-साधना की आधार भूमि है, परन्तु जीवित रहने के लिये जैसे खाना, पीना और श्वास लेना आवश्यक होता है वैसे ही जीवन को पवित्र रखने के लिये सामायिक के साथ दूसरी धर्म-क्रियाएँ करनी भी आवश्यक होती हैं। बिना उनके आध्यात्मिक क्षेत्र में जीवन का समुचित विकास नहीं होता है। इन छः अवश्यकरणीय कृत्यों में सर्वप्रथम सामायिक है। उसके बाद तीर्थंकर भगवान् की स्तुति है जो हमारी प्रेरणा के स्रोत हैं। फिर गुरुवर की वन्दना करते हैं जो हमारी नम्रता और विनय की द्योतक है। विनय से ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। चौथा आवश्यक है प्रतिक्रमण। महाराज साहब ने प्रेरणा के स्वर में कहा कि तीन आवश्यक कृत्यों के पाठ तो याद कर ही लिये हैं अब चौथे आवश्यक के पाठ भी याद कर लो। इसमें अधिकांश पाठ तो हमारे शास्त्रों से लिये हुए हैं एवं प्राकृत में हैं, बाकी के पाठ उन्हीं के विस्तार के रूप में पूर्वाचार्यों द्वारा निर्धारित हैं। महाराज साहब ने कहा कि तुममें इन पाठों को शीघ्र याद करने की योग्यता प्रतीत होती है। अगर संकल्प करलो तो शीघ्र याद कर सकते हो। उन्होंने प्रतिक्रमण के सारे पाठों को याद करने के लिये मुझे चार दिन का समय दिया। उनकी प्रेरणा एवं उत्साहवर्द्धन से मैं पूर्ण समर्पण भाव से उन्हें कंठस्थ करने लग गया।

गुरुदेव की कृपा, महाराज साहब का सान्निध्य एवं प्रेरणा बड़ी प्रभावशाली होती है जो मेरे जैसे सामान्य बालक को भी जाग्रत कर देती है। मैंने चार दिनों में ही सम्पूर्ण प्रतिक्रमण सूत्र कंठस्थ कर महाराज साहब को सुना दिया। सुनकर महाराज साहब ने प्रमोद भाव व्यक्त किये कि अब उन पाठों के अर्थ एवं भाव पर चिन्तन करना चाहिए, ताकि प्रतिक्रमण करने की क्रिया के साथ में वे भाव मन में रहें। सामायिक तो कमाई है, लेकिन प्रतिक्रमण उस कमाई की संचित पूँजी है। इसीसे कर्म-निर्जरा का द्वार खुलता है। इसमें हम अपनी भूलों को याद करते हैं, पश्चात्ताप के आँसू बहाते हैं, ताकि हमारी भूल हमारा शूल नहीं बन जाये। पश्चात्ताप के आँसुओं में हमारे पापों की कालिमा धुलती है एवं हम संकल्प लेते हैं कि इनकी पुनरावृत्ति नहीं करेंगे।

इस सम्बन्ध में मैं अपने साथियों से निवेदन करना चाहूँगा कि गुरु भगवन्तों का सान्निध्य प्राप्त कीजिये। जब भी अवसर मिले उनके सत्संग का

लाभ लें। वे निस्पृही होते हैं, सबके हित की बात सोचते हैं अतः उनकी प्रेरणा हमारे जीवन को सही दिशा में मोड़ती है। उनका कृपा-प्रसाद हमारे जीवन को सरल एवं पवित्र बनाने के साथ आनन्द से भरता है। मुझे इसकी अनुभूति हो रही है और निश्चित रूप से अगर आप उनके संसर्ग में आयेंगे तो आपको भी होगी, इसमें कोई संशय नहीं है। मेरे मन में ज्ञान प्राप्त करने की एवं धर्म के स्वरूप को समझने की उत्कट अभिलाषा जाग्रत हुई है, यह सब संतों की प्रेरणा का फल है। आप भी प्रतिक्रमण अवश्य याद करें एवं सीखें। फिर उसे अपना नित्य नियम बनायें। यह हमें जैन धर्म के सिद्धान्तों का तो परिचय करायेगा ही, हमारे जीवन में शुचिता लायेगा। यह जीवन पथ का पाथेय है, उपासक बनने का सोपान है। हमारे मन में जैनत्व का गौरव जगे, यह मेरे अन्तर मन की अभिलाषा है।

गुरु भगवन्तों से सुना है कि पूज्य जयमल जी महाराज साहब ने दीक्षा के पूर्व आचार्य भूधर जी म.सा. का मात्र एक प्रवचन सुनकर वैराग्य को तो प्राप्त कर ही लिया, उसी समय केवल तीन घंटे में खड़े-खड़े सम्पूर्ण प्रतिक्रमण सूत्र याद कर लिया। यह गुरु की महिमा है और संकल्प बल का प्रतिफल। हम 3 घंटे में नहीं तो 30 दिनों में तो याद कर ही सकते हैं, यदि संकल्प करलें।

-मेहता निवास, महामन्दिर गली, पीपलिया बाजार, ब्यावर

Thoughts

Present is a gift

- Be in Today, Believe in Today, Behave in Today, Be alive in Today, Because Yesterday died for Today and Tomorrow takes Birth from Today.
- Time is like a river. You can't touch the same water twice, because the flow that has passed will never pass again. So enjoy every moment of your life.
- The past is a history, The Future is a mystery, Today is a gift. That is a why it is called "PRESENT". So utilize your present to make your future bright.

-Ms. Minakshi Jain (Adv.)
Surana ki Badi Pole, Nagur-341001 (Raj.)

बाल-स्तम्भ

ढंढण मुनि

मुनि सुखलाल

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित कहानी को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 5 दिसम्बर 2009 तक श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001(राज.) के पते पर प्रेषित करें। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरूणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-250 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-200 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 150 रुपये तथा 100 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार।

बाईसवें तीर्थंकर भगवान् नेमिनाथ की सेवा में वासुदेव श्रीकृष्ण उपस्थित हुए। वंदना-नमस्कार तथा प्रवचन-श्रवण के बाद उन्होंने भगवान् से प्रश्न किया- ''भगवन्! आपके समस्त साधु-साध्वी परिवार में सबसे उग्र तपस्वी कौन है?''

नेमि- ''वासुदेव! मेरे समस्त साधु-साध्वी परिवार में ढंढण सबसे बड़ा तपस्वी है।''

कृष्ण- ''भगवन्! ढंढण मुनि ऐसी कौन-सी तपस्या करते हैं, जिससे वे आपके समस्त श्रमण-श्रमणी परिवार में सबसे बड़े तपस्वी हैं?''

नेमि- ''वासुदेव! यद्यपि ढंढण भूखे रहने वाली तपस्या तो नहीं करता, नहीं कर सकता, क्योंकि उसका शरीर अत्यन्त निर्बल है। पर फिर भी वह रूखे-सूखे भोजन को भी समभाव से खाता है, इसलिए वह सबसे उग्र तपस्वी है।''

कृष्ण- ''पर प्रभो! वह रूखा-सूखा भोजन क्यों करता है?''

नेमि- ''क्योंकि उसने अभिग्रह ले रखा है कि मैं वही भोजन करूँगा जो मेरी अपनी लब्धि-प्रभाव का होगा। दूसरों की लब्धि से मिलने वाला आहार मैं नहीं करूँगा। वह रोज भिक्षा के लिये जाता है, पर अन्तराय कर्म के योग से उसे अपनी लब्धि का सरस आहार नहीं मिलता है। फिर भी जैसा भी रूखा-सूखा आहार मिल जाता है उसे ढंढण समभावपूर्वक ग्रहण करता है और खाता है। उसकी समता की यह तपस्या मेरे समस्त शिष्य-परिवार में

उत्कृष्टतम है। इसलिए मैं उसे उग्र तपस्वी कहता हूँ।''

कृष्ण- ''लेकिन प्रभो! द्वारिका में भिक्षा की तो कोई कमी नहीं है। सभी साधुओं को भिक्षा मिलती है तो ढंढण मुनि को क्यों नहीं मिलती?;;

नेमि- ''यह अन्तराय कर्म उसके पिछले जन्म की देन है। पिछले जन्म में वह एक क्षेत्रपाल था। उसके पास लम्बा-चौड़ा क्षेत्र था। सम्राट की आज्ञा से वह उस क्षेत्र में हर वर्ष सौ बैलों से खेती करवाता था। प्रातःकाल से ही खेती का काम शुरु हो जाता था। मध्याह्न में जब बैलों तथा कर्मकरों के आहार-विश्राम का समय हो जाता तो भी वह उन्हें छुट्टी नहीं देता था। इतनी देर वे सम्राट का काम करते थे। फिर थोड़ी देर के लिए वह स्वयं अपने लिए अपने खेत में बुवाई का काम करवाता था। बैल तथा कर्मकर बेहद थके हुए होते थे। वे आहार और विश्राम चाहते थे। पर यह उनकी कोई परवाह नहीं करता था। यह समझता कि क्यों न लगे हाथ मैं भी थोड़ा अपना काम करवा लूं। उस समय इसके जो अन्तराय कर्म का बंध हुआ था इसी कारण द्वारिका में विपुल सामग्री होते हुए भी इसे सरस आहार नहीं मिल पाता। फिर भी वह इस अन्तराय कर्म को समतापूर्वक भोग रहा है। यह समझता है सौभाग्य से मुझे कुछ कर्म-निर्जरण का अवसर मिला है। मुझे सहज ही तपस्या हो रही है। मैं भूखा तो रह नहीं सकता, पर मन को राग-द्वेष से तो मुक्त रख सकता हूँ। इसीलिए मैं इसे उग्र तपस्वी कहता हूँ।''

श्रीकृष्ण ने यह वृत्तान्त सुन ढंढण मुनि के दर्शन करने की उत्कंठा व्यक्त की। उन्होंने पूछा- ''प्रभो! क्या मैं इसी समय ढंढण मुनि के दर्शन कर सकता हूँ।'' भगवान् ने कहा- ''तुम अभी राजभवन लौट रहे हो। ढंढण मुनि तुम्हें रास्ते में ही मिल जायेगा।''

भगवान् की यह अमृत वाणी सुन श्रीकृष्ण उन्हें वन्दना नमस्कार कर राजभवन को लौटने लगे। रास्ते में उन्हें एक कृशकाय मुनि भिक्षा के लिए घूमते हुए दिखाई दिये। उन्हें देखते ही श्रीकृष्ण हाथी पर से नीचे उतर गए। मुनि को अत्यन्त श्रद्धाभाव से वन्दन-नमस्कार किया और ऐसे तपस्वी के दर्शन कर अपने आपको भाग्यशाली समझने लगे।

उस समय वहाँ एक श्रेष्ठी भी खड़ा हुआ था। उसने श्रीकृष्ण को एक कृशकाय मुनि को नमस्कार करते हुए देखा तो विचार किया- ये तो कोई बड़े तपस्वी मालूम पड़ते हैं। इसलिए हमारे सम्राट भी इन्हें नमस्कार करते हैं। क्यों न मैं भी इन्हें अपने घर भिक्षा के लिए निवेदन करूँ? हो सकता है इससे मुझे

भी विशेष लाभ मिले। यही सोचकर उसने ढंढण मुनि से अपने घर भिक्षा ग्रहण करने के लिए पुरजोर प्रार्थना की। ढंढण मुनि उसकी उत्कट भावना को देखकर उसके घर भिक्षा के लिए पधारे। श्रेष्ठी ने अत्यन्त भक्ति भाव से उन्हें मोदक दिये। ढंढण मुनि अत्यन्त समता भाव से यह भिक्षा लेकर भगावन् नेमि के पास आये और निवेदन किया-"भगवन्! लगता है आज मेरा अन्तराय-कर्मों का बंधन शिथिल हो गया है। इसी से आज मुझे अपनी लब्धि के अनुसार सरस मोदक भिक्षा में मिले हैं।"

भगवान् ने मुस्कराते हुए कहा- "ढंढण, अभी तक तुम्हारा अन्तराय कर्म शिथिल नहीं हुआ है। आज तुम्हें जो ये सरस मोदक मिले हैं ये तुम्हारी अपनी लब्धि के नहीं, अपितु श्रीकृष्ण की लब्धि के हैं। श्रेष्ठी ने उनको तुम्हें वन्दना करते देखकर ही ये मोदक प्रदान किये हैं। यद्यपि यह अप्रासुक तो नहीं हैं, पर तुम्हारे अभिग्रह के अनुसार ये तुम्हारी अपनी लब्धि के नहीं हैं, इसी से ये तुम्हारे लिए अकल्प्य हैं।"

ढंढण मुनि ने उन मोदकों का आहार नहीं किया, अपने अन्तराय कर्म का चिन्तन करने लगे। चिन्तन करते-करते उन्हें अपने पूर्वजन्म की स्मृति हो आयी। वे अपने पूर्व कर्मों का आलोचन करने लगे। वे सोचने लगे- मुझे अपने ही कर्मों का फल मिल रहा है। जैसे बीज वैसे फल। मैंने दूसरों को अन्तराय दी वही मुझ पर लौटकर आ रही है। मेरे कर्मों का निर्जरण हो रहा है, यह बहुत खुशी की बात है और इस खुशी-खुशी में उन्हें केवलज्ञान संप्राप्त हो गया। वे राग-द्वेष मुक्त होकर वीतराग बन गए।

प्रश्न :

1. ढंढण मुनि को सबसे बड़ा तपस्वी क्यों कहा गया?
2. क्षेत्रपाल ने अन्तराय कर्म का बन्धन कैसे किया?
3. अर्थ बताइये- समभाव, अभिग्रह, कृशकाय, कर्मकर, अप्रासुक, आलोचन, मोदक।
4. श्रीकृष्ण कृशकाय मुनि के दर्शन कर अपने आपको भाग्यशाली क्यों समझने लगे?
5. "तुम्हारे अभिग्रह के अनुसार ये मोदक तुम्हारी अपनी लब्धि के नहीं हैं" ये वचन किसने, किसको कहे और क्यों?
6. 'जैसे बीज वैसे फल'- इस उक्ति को समझाइये।
7. विलोम शब्द बताइये (कथानुसार)- सबल, स्थूलकाय, चिकनाचुपड़ा, विभाव, दुर्भाग्यशाली, प्रासक, नीरस

उपन्यास (9)

सुबह की धूप

श्री गणेशमुनि जी शास्त्री

पूर्ववृत्तः- किशनलाल का दूसरा पुत्र आलोक भी अपने पिता से विवाद कर घर से निकल गया और रात्रि में ही वह क्रान्तिलाल के यहाँ पहुँचा। मीरा द्वारा इस रिश्ते को स्वीकार किये जाने पर क्रान्तिलाल ने दोनों के विवाह की रस्म पूरी की। विवाह के पश्चात् आलोक और मीरा लन्दन के लिए रवाना हो गये। किशनलाल के घर में....

जून के बड़े और बेहद गरम दिन। सूरज, जैसे आकाश से अंगारे बरसा रहा हो। श्वेत-नील पंखेरुओं की तरह व्योम में इधर-उधर छिटके बादलों के टुकड़े वातावरण में उमस को कुछ और अधिक बढ़ा रहे हैं। सड़क पर चल रहे इक्के-दुक्के व्यक्ति गर्मी से बचने के लिए अपने-अपने छाते ताने हुए हैं। प्रचण्ड गर्मी को सहन न कर पाने के कारण वायु भी जैसे कहीं छुपकर बैठ गया है।

'जरा कूलर तो चला दो मोतीराम! कुछ तो शान्ति मिलेगी'- अपने कमरे में बैठे किशनलाल ने कहा।

'साक्षात् शान्ति को पाकर भी जब आपको शान्ति नहीं मिली, तो दूसरों के सीने में आग लगाकर आप शान्ति की कामना करते हैं? आपको शान्ति हर्गिज नहीं मिल सकती।'- कमरे में प्रवेश करती हुई उसकी पत्नी ने कहा।

'और बोलो!...बोलती रहो।'

'क्या बोलूँ? आप तो पत्थर दिल होकर रह गये हैं। पहिले विश्वास घर से गया, अब आलोक भी चला गया।'

'चले गये तो क्या हुआ। तुम्हीं देख लेना, एक दिन रोते हुए आयेंगे वे दोनों।'

'वे भी तो आपके ही बेटे हैं। आप से कम जिद्दी नहीं हैं दोनों।' अपनी आँखों के आँसू पोंछती हुई शान्ति बोली।

'तुम अपने मन को छोटा क्यों कर रही हो? अक्ल ठिकाने आ जायेगी, तो दौड़े-दौड़े चले आयेंगे।'

'उनकी अक्ल तो ठिकाने है ही। आप अपना ध्यान रखिए। दो दिन हो गये। रोज कह रही हूँ कि दीपक को फोन कर लो। आज बीस जून हो गई है। अब तक तो उन्हें आ जाना चाहिए था।'

'उसका पत्र आ गया है। कल आने के लिए लिखा है।'

'आपने बतलाया क्यों नहीं?'

'कब बतलाता। मौका ही नहीं मिला। एक समस्या अभी खत्म ही नहीं हो पायी, दूसरी और तैयार हो गई।'

'अब फिर कोई ऐसा व्यवहार न कर बैठना, कि तीसरी समस्या और आ खड़ी हो।'

'मेरा व्यवहार? क्या कह रही हो तुम!'

'सही ही कह रही हूँ। तुम्हारे व्यवहार के कारण ही तो विश्वास और आलोक घर से गये हैं। अब, दीपक और आरती के आने पर, वे दोनों भाइयों के बारे में पूछेंगे, तब क्या जवाब दोगे?'

'यही कहूँगा, कि वे दोनों घर छोड़कर चले गये हैं।'

'तुम्हारी बात वे मान लेंगे?'

'न मानें, तो मैं क्या करूँ? चाहो तो तुम उन्हें सब कुछ बता देना। फिर, तुम सब मिलकर जो चाहो वो कर लेना।' कहते हुए किशनलाल ने सामने लगी घड़ी को देखा, और रेडियो का स्विच ऑन कर समाचार सुनने लगा।

'लो, श्रीनगर से दिल्ली आने वाली राजधानी एक्सप्रेस दुर्घटना ग्रस्त हो गई है।'- समाचार सुनने के बाद किशनलाल ने रेडियो बन्द करते हुए कहा।- 'कहीं, दीपक और आरती भी, इसी ट्रेन से न आ रहे हों?'

'मेरी भी दाहिनी आँख आज सुबह से ही फड़क रही है। ऐसा न हो, उन्हें कुछ हो गया हो। हे भगवान्!'- एक लम्बी सी साँस ली शान्ति ने।

'क्या गंवारों की तरह बातें कर रही हो। यह आँख फड़कना भी कोई कारण होता है अनिष्ट का?'

'तुम नहीं मानते हो तो मत मानो। मुझे तो लग रहा है, आज, जरूर कुछ न कुछ बुरा हो सकता है।'

'हे भगवान्! अब तो तू ही रक्षक है।'– लम्बी सांस लेकर किशनलाल ने कहा।

'आज जब दुःखों के पहाड़ हम पर टूट रहे हैं, तब आप को भी भगवान् का स्मरण हो आया है। वरना, आपने तो घर में नास्तिकता को चरम सीमा पर पहुँचाने में कोई कसर नहीं छोड़ी है।'

'शान्ति! तुम क्यों अपने वाग्–बाणों से मुझे घायल कर रही हो? मैंने हमेशा अपने विचार ही तो तुम लोगों को बताये हैं। लेकिन आज मैं कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ कि क्या करूँ?'

किशनलाल अपने कमरे के कोने में रखे फोन तक गया, और रेलवे इन्क्वायरी का नम्बर मिलाकर पूछा– हैलो SS।– राजधानी एक्सप्रेस की दुर्घटना कितने बजे हुई थी?..... क्या, अभी तक सही सूचना नहीं आई है? .....जी हाँ, मेरे लड़के–लड़की को भी आज आना था। कहीं वे इसमें न हो।.....ठीक है।

'क्या बात है?' –शान्ति ने व्यग्रता में पूछा।

'वे अभी पता लगाकर सूचित करेंगे।'

शान्ति की चिन्ता बढ़ गई। उसी को प्रकट करती हुई बोली– 'आप चले क्यों नहीं जाते?'

इस समय पुनः फोन की घंटी बजी, फोन उठाकर फिर किशनलाल ने पूछा– 'हैलो SS।.....क्या?..दोनों घायल हो गये हैं।....कहाँ? दिल्ली सफदरजंग अस्पताल में ले जाये गये हैं। ..उन्हें.....हे राम!' –कहते–कहते उसने फोन रख दिया।

'क्या? मेरा दीपक और आरती, दोनों घायल हो गये हैं?

'हाँ शान्ति!'

शान्ति, फफक–फफक कर रोने लगी। और आँखें बन्द करके बोली– 'हे भगवान्! मेरे दीपक और आरती की रक्षा करना।

'तुम रो रही हो शान्ति!'

'नारी के पास रोने के सिवाय और है ही क्या? लगता है, भगवान् मेरी ममता की परीक्षा ले रहा है।'

'हाँ, और मेरे धैर्य की भी।'

'उन्हें कहीं कुछ हो गया, तो मैं जीवित नहीं रहूँगी।....मुझे उनके पास ले चलो।

'धीरज रखो शान्ति! पहले मैं स्वयं जाकर पता लगा लेता हूँ।'

'पता लग तो चुका है। वे अस्पताल में भर्ती हैं। मैं तो आपके साथ ही चलूँगी।'

'ठीक है, तो तुम तैयार होकर जल्दी से आ जाओ। मैं ड्राइवर को तैयार होने के लिए कहता हूँ।'

किशनलाल बाहर आ गया और ड्राइवर से कार बाहर निकालने व तुरन्त सफदरजंग अस्पताल चलने को कहा।

थोड़ी ही देर बाद.....पति-पत्नी के कार में बैठ जाने पर ड्राइवर ने पूछा- 'सीधे अस्पताल ही चलना है मालिक!'

'हाँ, सफदर गंज अस्पताल!'

गाड़ी चल पड़ी।

'उन्हें कुछ हो गया, तो मैं क्या करूँगी?'- कार चलते ही शान्ति ने पूछा।

'होने वाला टलता नहीं है शान्ति! मन को कठोर बनाना पड़ेगा।... इस बात का मुझे विश्वास हो गया है, कि विपत्ति अकेली नहीं आती। विश्वास गया तो आलोक भी चला गया। और अब यह दुर्घटना घट गई।'

करीब तीन घण्टे बाद, उनकी गाड़ी अस्पताल पहुँची। इस बीच, पूरी यात्रा में, पति-पत्नी तमाम तरह की शंकाएँ-आशंकाएँ प्रकट करते रहे और भगवान् का स्मरण करते-करते आश्वस्त होते रहे।

अब, दोनों कार से उतरे।

किशनलाल, अस्पताल की इन्क्वायरी की ओर कुछ क़दम ही बढ़ पाया था, तभी उसे अपना एक मित्र, सूजी हुई आँखों से बह रहे आँसुओं को

पोंछता खड़ा दिखलाई पड़ गया। उसे देखकर किशनलाल ने पूछा- 'शंकर! तुम यहाँ? यह क्या हालत बना रखी है भाई!'

शंकर अपने पुराने मित्र को देखकर, उससे चिपटता हुआ बोला- ''मैं बर्बाद हो गया लाला! मेरा सब कुछ लुट गया।' कहता-कहता वह फिर से सुबकने लगा।

'अरे-अरे! हुआ क्या है? कुछ बताओगे भी, या यूँ ही रोते रहोगे?'- शान्ति ने उससे पूछा।

'क्या बतलाऊँ भाभी! बीबी और बच्चे, सभी के सभी इस ट्रेन दुर्घटना की भेंट चढ़ गये हैं। मैं अकेला ही रह गया हूँ।'

'धैर्य रखो शंकर! होनी टल नहीं सकती। मेरा दीपक और आरती भी इसी दुर्घटना में घायल हो गये हैं। न मालूम क्या हुआ होगा उनका? शान्ति! तुम यहाँ शंकर के पास बैठो। मैं पता लगाकर आता हूँ कि वे किस वार्ड में हैं?' कहकर किशनलाल, अस्पताल के अन्दर चला गया।

घायलों की सूची में दोनों का नाम देखकर, वह पहले दीपक के वार्ड में गया।

वार्ड में पहुँचकर, उसने इधर-उधर निगाहें घुमाई।

'दूर , कोने में एक पलंग पर तकिये के सहारे दीपक लेटा हुआ है, उसके सिर पर पट्टी बँधी हुई है'- यह देखकर, किशनलाल लपककर उसके पास गया, और, उसे अपने अंक में समेटता हुआ बोला- 'दीपक! मेरे बेटे।'

पिता को सामने देखकर दीपक का हृदय भर आया, वह सिर्फ इतना ही बोल पाया- 'पिताजी!'

'देखिये, अभी आप मरीज से बिल्कुल बात न करें। वह काफी कमजोर है। एक हाथ कट जाने से उसे मानसिक आघात भी पहुँचा है। खून भी काफी बह गया है। इस स्थिति में; आप उसे केवल देख सकते हैं। बात न करें'- एक नर्स, उसके पास आकर बोली।

'तेरा हाथ कट चुका है दीपक! मेरे लाड़ले! यह क्या सुन रहा हूँ मैं?'

'कृपया आप बाहर चलिए'- नर्स ने उसका कंधा थपथपाते हुए कहा।

(क्रमशः)

स्वास्थ्य विज्ञान

सुजोक एक्यूप्रेशर

डॉ. चंचलमल चोरडिया

अंगों के आकार में समानता वाले अवयव अंगों के उपचार में सहायक–

अनादिकाल से चिकित्सक और वैज्ञानिक मानव जाति को रोगमुक्त रखने हेतु प्रयत्नशील हैं। परन्तु आज भी रोग एवं रोगियों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है, जो हमें सोचने के लिये बाध्य कर रही है कि स्वास्थ्य के सम्बन्ध में कहीं मूल में भूल हो रही है। कहीं हम शरीर की क्षमताओं से अनभिज्ञ तो नहीं हैं? चिकित्सा के क्षेत्र में विज्ञान के लम्बे चौड़े दावों के बावजूद आज तक मानव शरीर के बालों, नाखूनों, पसीने की बूंदों जैसे तुच्छ अवयवों तथा शरीर की कोशिकाओं अथवा रक्त की एक बूंद जैसे अति आवश्यक अवयवों का निर्माण नहीं कर सका, जिसे प्रत्येक मानव का शरीर स्वयं निर्मित करता है। अतः स्वस्थ रहने की कामना वालों को इस प्रश्न के समाधान हेतु सम्यक् चिंतन, स्वाध्याय और समीक्षा करनी चाहिए। शरीर के विभिन्न अंग उपांगों की स्थिति एवं आकार के रहस्य को समझने का प्रयास करना चाहिये। शरीर में कहाँ–कहाँ समानता अथवा एकरूपता है और क्यों? क्या उपचार में शरीर के वे भाग आपस में सहयोग कर सकते हैं? शरीर में मिलते जुलते अंग उपांगों के आधार पर चिकित्सा करने का सिद्धान्त बहुत ही सरल एवं सीधा होता है।

अनादिकाल से आपस में मिलते जुलते आकारों के बीच संबंधों को स्थापित कर चिकित्सा के क्षेत्र में उनका सहयोग लिया जाता रहा है। इसी कारण बहुत से आहार विशेषज्ञों की ऐसी मान्यता है कि बादाम का आकार आंख जैसा, काजू का आकार गुर्दे जैसा, अखरोट का आकार मस्तिष्क के समान, सेब का आकार हृदय जैसा, अंगूर के गुच्छे का आकार फेंफड़ों जैसा, पपीते का पेट जैसा होने से इन पदार्थों को खाने से सम्बन्धित अंगों की प्रक्रियायें प्रभावित होती हैं। इसी प्रकार जब प्रकृति के दो अवयवों के आकारों में समानता अथवा एकरूपता

होती है तो उससे सम्बन्धित अंगों के उपचार में वे सहायक सिद्ध हो सकते हैं। माँ के गर्भ में गर्भस्थ बालक की जो स्थिति होती है वैसा ही आकार हमारे कान का होता है तथा उसी आकार को आधार मानकर चिकित्सा के लिए अंगों की स्थिति जानी जाती है। कान के नीचे का भाग मस्तिष्क से सम्बन्धित होता है। इसी कारण जब कोई बालक पहले गलती करता था, अध्यापक उसका कान पकड़ते थे, जिससे उसके मस्तिष्क में झनझनाहट होने लगती और उसकी सुषुप्त स्मरण शक्तिजागृत होने लग जाती, ताकि बालक को अपनी गलती का अहसास हो जाता और प्रश्न का उत्तर प्राप्त हो जाता। कान के एक्यूप्रेशर/एक्यूपंचर विशेषज्ञ कानों में इन प्रतिबिम्ब केन्द्रों पर दबाव देकर अथवा सुइयों से छेदन कर विभिन्न रोगों का सफल प्रभावशाली उपचार करते हैं।

सुजोक एक्यूप्रेशर की विशेषताएँ–

सुजोक एक कोरियन शब्द है। सु का मतलब हाथ और जोक का मतलब पैर। डॉ. जे.वु. पार्क ने हथेली और पगथली की शरीर में एक समानता का रहस्य जाना। हथेली और पगथली का आकार मिलता जुलता है एवं उसकी एकरूपता के आधार पर हथेली एवं पगथली से संबन्धित अंगों के प्रतिबिम्ब केन्द्रों पर दबाव देकर सभी प्रकार के रोगों का उपचार प्रभावशाली ढंग से शीघ्र एवं सरलतापूर्वक किया जा सकता है। यह पद्धति पूर्ण अहिंसक, दुष्प्रभावों से रहित, सस्ती, स्वावलम्बी तथा सभी के लिये, सभी समय तथा सभी स्थानों पर उपलब्ध है। बाल, वृद्ध, शिक्षित,अशिक्षित इसको आसानी से सीख सकता है एवं अपना उपचार स्वयं आसानी से कर सकता है।

इस पद्धति द्वारा न केवल शारीरिक अपितु मानसिक स्तर तक सभी प्रकार के रोगों का प्रभावशाली एवं स्थायी उपचार किया जा सकता है। शारीरिक स्तर पर उपचार दबाव, मसाज, बीज द्वारा वास्तविक अथवा सूक्ष्मतम स्तर पर प्रतिबिम्ब केन्द्रों से विजातीय तत्त्वों को हटाकर तथा मानसिक स्तर पर बियोल मेरेडियन तथा वायु, ताप, गर्मी, आर्द्रता, शुष्कता एवं ठण्डक आदि छः ऊर्जाओं को संतुलित करके किया जाता है। पद्धति अपने आप में परिपूर्ण है तथा कभी–कभी तो असाध्य एवं पुरानी बीमारियों में 2–3 उपचार में ही काफी राहत दिलाती है। इसी कारण अनेक विकसित राष्ट्रों में यह पद्धति बहुत अधिक

विख्यात हो गई है तथा अनेक शल्य चिकित्सा के विकल्प के रूप में पिछले चंद वर्षों में विश्व भर में फैल रही है।

हथेली एवं पगथली का शरीर में महत्त्व–

हाथ एवं पैर में नाखून के नीचे के भाग का आकार दांत से मिलता-जुलता होता है। अतः दांतों के दर्द में उनकी जड़ों में 2-3 मिनट का दबाव (कुछ समय के अन्तराल में बार-बार) देने से अथवा रबड़ बैंड लगाने से तुरन्त राहत मिलती है।

हस्त रेखा विशेषज्ञ हथेली में रेखाओं अथवा अन्य आकार देखकर मनुष्य के भूत, वर्तमान एवं भविष्य की घटनाओं को बताते हैं तथा महाभूत तत्त्वों को संतुलित कर विभिन्न रोगों का उपचार करते हैं। नाखूनों की बनावट एवं उनके रंगों के आधार पर मनुष्य के स्वभाव के बारे में जाना जा सकता है। हथेली की अंगुलियों में तरह-तरह के रत्न एवं विशिष्ट पत्थर अंगुठियों में पहनने से उन रत्नों की तरंगों का प्रभाव सभी स्तर पर पड़ने लगता है। जिससे न केवल रोगों में राहत मिलती है, अपितु ग्रह-नक्षत्रों की प्रतिकूल स्थिति को भी बदला जा सकता है। एक्यूप्रेशर की रिफ्लेक्सोलोजी चिकित्सा प्रणाली के अनुसार हथेली एवं पगथली में शरीर के सभी अंगों के प्रतिबिम्ब केन्द्र होते हैं। रोग की अवस्था में उन केन्द्रों पर विजातीय तत्त्व जमा होने लगते हैं। जिनको दबाव द्वारा हटाने से सभी प्रकार के रोगों में राहत मिलती है, परन्तु डॉ. जे.वु. पार्क की खोज शारीरिक अंगों की हथेली एवं पगथली में समानता के आधार पर होने से अधिक वैज्ञानिक, तर्क संगत एवं उपचार हेतु सरल है।

मनुष्य के शरीर को मुख्यतः छः भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहला हिस्सा सिर से गले तक का भाग, दूसरा हिस्सा बीच का पूरा शरीर, तीसरा और चौथा भाग दोनों हाथ तथा पाँचवां और छठा भाग दोनों पैर हैं। सिर, हाथ एवं पांव से लम्बाई में छोटा होता है लेकिन ज्यादा मजबूत और मोटा होता

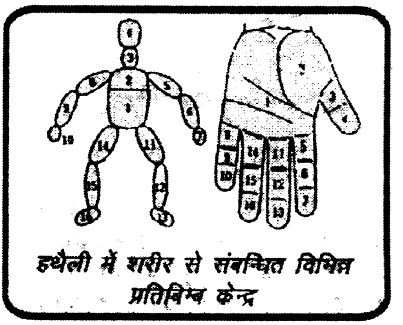

हथेली में शरीर से संबन्धित विभिन्न प्रतिबिम्ब केन्द्र

है। हथेली का अंगूठा चारों अंगुलियों के प्रत्येक कार्य में मदद करता है तथा उनको नियन्त्रित करता है।

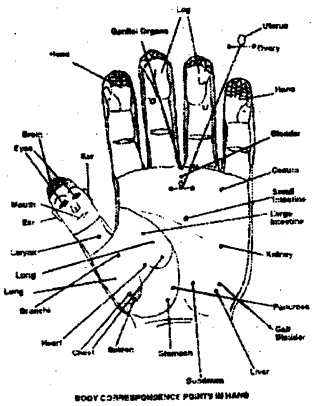

BODY CORRESPONDENCE POINTS IN HAND

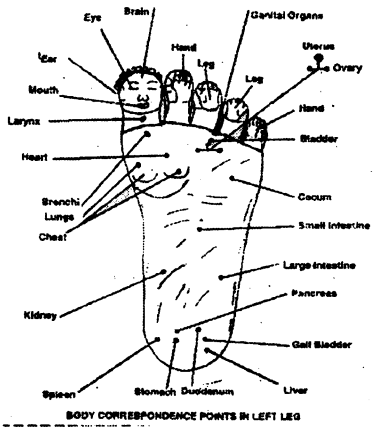

BODY CORRESPONDENCE POINTS IN LEFT LEG

सुजोक एक्यूप्रेशर के अनुसार हाथ अथवा पैर के अंगूठे का आकार सिर से गले तक के भाग के समान, बीच की दोनों अंगुलियों की दोनों पैर से तथा बगल की दोनों अंगुलियों की दोनों हाथों की बनावट से तुलना की गई है। मध्य की पूरी हथेली धड़ अथवा बाकी सारे शरीर का प्रतिनिधित्व करती है। हाथ का अंगूठा और अंगुलियाँ पैरों के अंगूठे एवं अंगुलियों से आकार में बड़े होने से यह समानता स्पष्ट देखी जा सकती है।

हाथ का अंगूठा दो भागों में विभाजित है- सिर और गर्दन। बाकी अंगुलियां तीन-तीन भागों में विभक्त है, जो हाथ और पैर की अभिव्यक्ति करती हैं। हाथ के तीन भाग- पहला अंगुलियों से कलाई तक, दूसरा कलाई से कुहनी तक एवं तीसरा कुहनी से कन्धे तक के भाग का प्रतिनिधित्व करता है। इसी प्रकार पैर के तीन भाग- पहला अंगुलियों से टखने तक, दूसरा टखने से घुटने तक तथा तीसरा घुटनों से नितम्ब तक का प्रतिनिधित्व करता है। अंगूठें के पास वाली तर्जनी में उसी तरफ वाले हाथ के, मध्यमा में उसी तरफ वाले पैर, अनामिका में दूसरे तथा सबसे छोटी अंगुली में दूसरे हाथ के प्रतिबिम्ब केन्द्र होते हैं।

बीच की हथेली एवं पगथली को दो भागों में विभाजित किया गया है- उभरा हुआ भाग डायाफ्राम रेखा के ऊपर के हिस्से से तथा बाकी भाग डायांफ्राम रेखा के नीचे वाले अंगों से सम्बन्धित होता है जैसा चित्र में स्पष्ट दर्शाया गया है। इस प्रकार मनुष्य के पूरे शरीर के प्रत्येक भाग को हथेली अथवा पगथली में

समानता के आधार पर प्रतिबिम्बित किया गया है। शरीर के जिस भाग में असंतुलन अथवा रोग होता है तब उससे सम्बन्धित भाग में विजातीय तत्त्व जमा होने लगते हैं। अतः उस स्थान पर दबाव देने से दर्द की अनुभूति होने लगती है। जितना ज्यादा दर्द होता है रोग उतना ही उग्र एवं पुराना होता है। इन विजातीय तत्वों को एक्यूप्रेशर द्वारा वहाँ से हटाने से सम्बन्धित अंग में प्राण ऊर्जा का प्रवाह संतुलित हो जाता है, जिससे रोगी रोग-मुक्त होने लगता है।

उपचार से पूर्व पूर्ण हथेली एवं पगथली के सूक्ष्मतम भाग पर दबाव देकर निदान हेतु निरीक्षण करना चाहिये। जिन-जिन प्रतिबिम्ब केन्द्रों पर दबाव देने से दर्द आता है, उन सभी प्रतिबिम्ब बिन्दुओं पर उपचार करना चाहिये। भले ही उनका रोगग्रस्त अंग से प्रत्यक्ष सम्बन्ध न भी हो। जो रोग के लक्षण बाह्य प्रकट होने लगते हैं वे तो रोगों के परिवार के मुखिया होते हैं तथा दर्द आने वाले सम्बन्धित प्रतिबिम्ब केन्द्र उस रोग से अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होते हैं। इस प्रकार इस पद्धति द्वारा पूरे शरीर को एक इकाई मानकर एक साथ पूरे शरीर में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रोगों का उपचार होने से चिकित्सा अत्यधिक प्रभावशाली होती है।

सुजोक क्यों प्रभावशाली?

सुजोक सहज, सरल, सस्ती, स्थायी, दुष्प्रभावों से रहित, शरीर की प्रतिरोधात्मक क्षमता को बढ़ाने वाली होती है, जो व्यक्ति का स्वविवेक जागृत कर, स्वयं की क्षमताओं के सदुपयोग की प्रेरणा देती है। वे हिंसा पर नहीं अहिंसा पर, विषमता पर नहीं समता पर, साधनों पर नहीं साधना पर, दूसरों पर नहीं स्वयं पर आधारित होती है। यह शरीर के साथ-साथ मन एवं आत्मा के विकारों को दूर करने में सक्षम होती है। यह प्रकृति के सनातन सिद्धान्तों पर आधारित होने के कारण अधिक प्रभावशाली, वैज्ञानिक, मौलिक एवं निर्दोष होती है।

-चोरडिया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003(राज.)

हमारी शक्ति 'पर' से दबी हुई है, उस पर आवरण छाया हुआ है। इस आवरण को दूर करने एवं 'स्व' के शुद्ध स्वरूप को पहचानने का मार्ग स्वाध्याय है। -आचार्य हस्ती

आचार्य हस्ती जन्म-शताब्दी

(पौष शुक्ला 14 विक्रम संवत् 2066 से पौष शुक्ला 14, विक्रम संवत् 2067 तदनुसार दिनांक 30 दिसम्बर 2009 से 18 जनवरी 2011 तक)

पुरिसवरगंधहत्थी, इस युग की विशिष्ट विभूति, अप्रमत्तयोगी, निरतिचार संयम-साधक, इतिहास निर्माता, छेदसूत्रों के विशिष्ट ज्ञाता, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक, ज्ञान-क्रिया एवं पुण्यवानी के अद्भुत संगम, जिनशासन प्रभावक, जैन जगत् के जाज्वल्यमान नक्षत्र, स्थानकवासी श्वेताम्बर जैन परम्परा के चिन्तामणिरत्न, लक्षाधिक भक्तों के हृदय सम्राट्, संघ शिरोमणि, अध्यात्मयोगी, युगमनीषी आचार्यप्रवर परम पूज्य श्री हस्तीमल जी महाराज का जन्म पौष शुक्ला 14, विक्रम संवत् 1967 को पीपाड़ शहर, जिला-जोधपुर में माँ रूपा की कुक्षि से बोहरा कुल में हुआ था। आप स्थानकवासी जैन परम्परा के उज्ज्वल नक्षत्र थे। श्रमण भगवान् महावीर के शासन में उन्हें 81वें पट्टधर तथा रत्नसंघ (पूज्य श्री कुशलचन्द्र जी एवं क्रियोद्धारक आचार्य श्री रत्नचन्द्र जी महाराज की परम्परा) में सप्तम आचार्य के रूप में आदर से स्मरण किया जाता है। असामयिक पारिवारिक वज्रपातों के द्रष्टा वैरागी हस्ती ने बालवय में ही सत्य का साक्षात्कार प्रारम्भ कर दिया था। संसार की अनित्यता एवं क्षणभंगुरता का यह बोध उन्हें वैराग्य रंग में रंगने लगा, फलतः मात्र 10 वर्ष 18 दिन की वय में मुमुक्षु माता रूपादेवी के साथ गुरुदेव आचार्यप्रवर श्री शोभाचन्द्र जी महाराज के मुखारविन्द से आप प्रव्रजित हो गए। स्वाध्याय एवं सेवा के प्रति समर्पित भाव से संलग्न मेधावी मुनि को गुरुदेव शोभाचन्द्र जी ने मात्र 15 वर्ष की वय में आचार्य पद के योग्य मान लिया तथा 20 वर्ष की युवावय में वे रत्नसंघ के तेजोदीप्त एवं प्रतिभासम्पन्न आचार्य बने। रत्नसंघ के बाल-ब्रह्मचारी आचार्यों की श्रेणी में उन्होंने चार चाँद लगाए।

साधना की तेजस्विता एवं कषायों की उपशमशीलता उनके आध्यात्मिक जीवन के आकर्षण थे। अप्रमत्तता, सहिष्णुता, क्षमाशीलता, निस्पृहता, समता, निरभिमानता सरलता, असंगता, हितमितभाषिता आदि बहुविध आध्यात्मिक सद्गुणों के वे ज्योति पुंज एवं आचार्य की आठ सम्पदा से

युक्त थे। आचार्य श्री आत्माराम जी महाराज ने उन्हें 'पुरिसवरगंधहत्थी' विशेषण समीचीन ही दिया था। स्वकीय-साधना के साथ आचार्य श्री हस्ती लाखों श्रावक-श्राविकाओं एवं जन-साधारण की आत्मिक चेतना का विकास करने में सन्नद्ध रहे। आपने हजारों को धूम्रपान एवं शराब का त्याग कराया, सप्त कुव्यसनों से रहित बनाया। जीवन-निर्माण की दिशा में स्वाध्याय एवं सामायिक के दो ऐसे सम्बल दिए जो व्यक्ति की चेतना को आमूलचूल बदलने के प्रभावी साधन थे। स्वाध्याय से भीतर की अंधी मान्यताओं का निकन्दन सम्भव है, साथ ही ज्ञान की ऐसी ऊर्जा प्राप्त होती है जो मनुष्य को असन्मार्ग से सन्मार्ग पर आरूढ़ करती है। सामायिक व्यक्ति की चैतसिक विषमताओं के प्रक्षालन का कार्य करती है, उसके मन के कलिमल को धोकर सुख-दुःख, हानि-लाभ, अनुकूलता-प्रतिकूलता में समता के अभ्यास को सरल बनाती है। सामायिक-स्वाध्याय का नारा आचार्य हस्ती के साथ आत्मसात् हो गया। विकार-विजय के क्षेत्र में व्रत-प्रत्याख्यानों के अन्तर्गत हजारों दम्पतियों ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार कर जीवन के अवशिष्ट समय को संवर एवं निर्जरा की साधना में आगे बढ़ाया। सहस्राधिक श्रावक-श्राविकाओं ने 12 व्रत स्वीकार कर इस ओर कदम बढ़ाया। प्राणिमात्र के करुणार्द्र सन्त ने लाठी से पीटे जाते सर्प को बचाकर निर्भयता, प्राणिमात्र के प्रति मैत्री एवं आत्मशक्ति का परिचय दिया।

आपका कृतित्व अमिट है। 31 संतों एवं 54 साध्वियों को आपने जैन भागवती दीक्षा प्रदान की। 'जैनधर्म का मौलिक इतिहास' के चार भाग जैन इतिहास के लिए संदर्भ ग्रन्थ के रूप में प्रतिष्ठित है। 'मेरे अन्तर भया प्रकाश' जैसी काव्यकृतियाँ आध्यात्मिक अलख जगाने वाली हैं। बालकों में सत्संस्कारों एवं नारी-शिक्षा को आपने समाज की सम्यक् प्रगति हेतु आवश्यक समझा। आपकी पावन-प्रेरणा से सैकड़ों स्वाध्यायी तैयार हुए, जो पर्युषण पर्व में अपनी सेवाएँ देते हैं। विद्वत्निर्माण हेतु जयपुर एवं जलगाँव में उपक्रम प्रारम्भ हुए।

प्रतिदिन 12 से 2 बजे तक, प्रत्येक गुरुवार, बदि दशमी आदि को ध्यान एवं मौन की साधना कर वे आत्म-चेतना को सदैव सजग, निर्मल एवं पावन बनाने के प्रति सन्नद्ध रहे। विचारों की उदात्तता के साथ वे 'गुणिषु प्रमोदं'

की भावना से पूरित थे। साधना का शिखर निमाज में तब देखने को मिला जब 13 दिवसीय तप-संथारे के साथ उन्होंने अनासक्त भाव से वैशाख शुक्ला अष्टमी दिनांक 21 अप्रेल 1991 को महाप्रयाण किया।

उच्चकोटि के उन साधक महापुरुष की जन्म-शताब्दी सन्निकट है। इसे 'आध्यात्मिक चेतना वर्ष' के रूप में मनाने हेतु अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के सदस्यों ने निश्चय कर इसे विशाल एवं व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने हेतु 'आचार्य हस्ती शताब्दी समिति' का गठन किया है।

समिति इस कार्यक्रम को पौष शुक्ला चतुर्दशी विक्रम संवत् 2066 से पौष शुक्ला चतुर्दशी विक्रम संवत् 2067 तक (तदनुसार 30 दिसम्बर 2009 से 18 जनवरी 2011 तक) मनाएगी।

समिति आप सब श्रद्धालु एवं धर्मनिष्ठ श्रावक-श्राविकाओं की भावना का आदर करते हुए इस शताब्दी वर्ष को ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की अभिवृद्धि के लक्ष्य से अनेकविध योजनाओं को मूर्तरूप प्रदान करने हेतु कृतसंकल्प है। जो योजना तैयार की गई है वह यहाँ संक्षेप में प्रस्तुत है, साथ ही इसमें जो संकल्प-पत्र है उसे आप भरकर अपनी अध्यात्म-चेतना को जाग्रत करने हेतु सन्नद्ध बनेंगे, ऐसी हार्दिक भावना है।

शुभ संकल्प

1. अध्यात्म चेतना वर्ष में घर-घर में साप्ताहिक प्रार्थना।
2. अध्यात्म चेतना वर्ष में आचार्य हस्ती जन्म-दिवस, दीक्षाभिषेक, आचार्य पद ग्रहण दिवस व पुण्य-दिवस पर संघ के हर परिवार में नियत समय पर नवकार मंत्र का जाप।
3. अध्यात्म-चेतना वर्ष में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रातः 8 बजे/रात्रि 9 बजे प्राणिमात्र के कल्याण व संघ के प्रत्येक सदस्य के उत्थान की कामना के साथ 'मित्ति मे सव्व भुएसु, वैर मज्झं ण केणइ' की मंगल भावना के साथ वैर, वैमनस्य एवं विषाद का विसर्जन।
4. अध्यात्म चेतना वर्ष में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा सोने के पूर्व 5 मिनट आत्मचिन्तन, जीवन लक्ष्य का चिन्तन एवं जीवन में नैतिकता, प्रामाणिकता, सरलता एवं उदारता का संकल्प।

5. प्रातः उठकर प्रत्येक व्यक्ति द्वारा एक दिन के लिये किसी न किसी त्याग का संकल्प।
6. परिजनों एवं स्वधर्मी बन्धुजनों के विरुद्ध न्यायालय में वाद के लिए नहीं जाना।

सामायिक

7. नित्यप्रति सामायिक।
8. साप्ताहिक सामायिक।
9. नित्यप्रति एक से अधिक सामायिक।
10. सप्ताह में कम से कम एक दिन धर्मस्थानक में सामूहिक सामायिक में भाग लेना।

स्वाध्याय

11. नित्यप्रति 20 मिनट स्वाध्याय।
12. पर्युषण सेवा हेतु नये 100 स्वाध्यायी तैयार करना।
13. देश के सभी प्रान्तों में स्वाध्यायी भेजना।
14. पर्युषण के अतिरिक्त एक माह/दो माह सेवा देने वाले स्वाध्यायी तैयार करना।
15. आचार्य हस्ती जन्म-दिवस का देश के विभिन्न भागों में आयोजन, विद्वान् वक्ता स्वाध्यायी भेजने की व्यवस्था।
16. वर्षभर में विभिन्न प्रसंगों पर आचार्य हस्ती व्याख्यान माला के माध्यम से गुरुदेव के जीवन के विभिन्न आयामों पर परिचर्चा।

ब्रह्मचर्य

17. आजीवन शीलव्रत
18. पूरे एक वर्ष शीलव्रत
19. महीने में 25 दिन ब्रह्मचर्य का पालन।
20. अष्टमी, चतुर्दशी, पक्खी पर्व/पाँच पर्व तिथि शीलव्रत।

रात्रि-भोजन त्याग

21. सामूहिक रात्रि-भोजन त्याग।
22. आजीवन रात्रि-भोजन त्याग।
23. वर्ष भर रात्रि-भोजन त्याग।

24. आजीवन रात्रि चौविहार-त्याग।
25. वर्षभर रात्रि चौविहार-त्याग।
26. अष्टमी, चतुर्दशी, पक्खी/पाँच पर्व तिथि रात्रि-भोजन त्याग।
27. सामूहिक रात्रि-भोजन आयोजन त्याग।
28. सावन-भादवा दो माह रात्रि-भोजन त्याग।
29. चातुर्मास में रात्रि-भोजन त्याग।

व्रताराधन

30. बारह व्रत
31. माह में 6 दया, संवर, पौषध। (अष्टमी, चतुर्दशी, पक्खी आदि)
32. महीने में एक बार दया, संवर, पौषध।
33. वर्षीतप (वर्षीतप पूर्णाहुति 19 जनवरी 2011)।
34. पौरसी प्रत्याख्यान।
35. दैनिक 14 नियम, तीन मनोरथ, द्रव्य मर्यादा।
36. नवकारसी प्रत्याख्यान।
37. प्रतिदिन एक घंटे मौन साधना।
38. प्रतिदिन एक विगय का त्याग।
39. अपने-अपने घर में कच्चे पानी पीने का त्याग।
40. आजीवन दो/तीन/चार खंद।
41. जमीकन्द का त्याग-पूर्ण/आंशिक।
42. कोई एक विगय का पूरे वर्ष के लिए त्याग।
43. अपने घर में निज प्रयोग हेतु सचित्त का त्याग पूरे वर्ष/आजीवन।
44. सप्त कुव्यसन का त्याग।
45. महीने में.....दिन बड़ी स्नान का त्याग।

ज्ञान–साधना

46. अपने परिवार के सदस्यों को शिक्षण बोर्ड की परीक्षा से जोड़ना।
47. सामायिक के पाठ कण्ठस्थ विधि सहित।
48. सामायिक अर्थ व 32 दोषों की जानकारी।
49. प्रतिक्रमण विधि सहित।

50. प्रतिक्रमण अर्थ की जानकारी।
51. पच्चीस बोल-सामान्य अर्थ बोध सहित।
52. पाँच समिति-तीन गुप्ति का सामान्य ज्ञान।
53. नन्दीसूत्र, कल्याणमन्दिर।
54. आगम पढ़ने का संकल्प.....वर्ष में.....आगम।
55. आचार्य हस्ती जीवनी पढ़ना।
56. नवतत्त्व बोध।
57. दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन कण्ठस्थ करना, अर्थ की जानकारी एवं स्वाध्याय करना।

प्रकाशन

58. गुरु हस्ती जीवनी-पद्यानुवाद।
59. जैन इतिहास (संक्षिप्त संस्करण)।
60. जैन इतिहास (अंग्रेजी अनुवाद संस्करण)।
61. जिनवाणी विशेषांक का प्रकाशन।

जीवदया

62. संघ के अन्तर्गत जीवदया समिति का गठन।
63. इस वर्ष पौष शुक्ला चतुर्दशी को पूरे देश में अगता दिवस घोषित करवाने का प्रयास।
64. पौष शुक्ला चतुर्दशी को राजस्थान सरकार में स्थाई अगतों की सूची में शामिल करवाना।

संस्थागत कार्य/संगठनात्मक कार्य

65. आचार्य हस्ती अहिंसा शोध संस्थान की योजना को मूर्त रूप देना।
66. जोधपुर में निवृत्त श्रावक-श्राविकाओं के लिये आवास, भोजन व धर्माराधन की समुचित व्यवस्था।
67. आचार्य शोभाचन्द्र ज्ञान भण्डार को सुव्यवस्थित करना।

68. सामायिक-स्वाध्याय भवनों में धार्मिक उपकरणों की समुचित व्यवस्था।
69. सामायिक-स्वाध्याय भवनों में पुस्तकालयों की समुचित व्यवस्था।
70. देश के चुनिन्दा क्षेत्रों में पूर्णकालिक धर्माध्यापक की नियुक्ति व उनके माध्यम से धार्मिक पाठशाला के साथ ही श्रावक-श्राविकाओं के धार्मिक अध्यापन की व्यवस्था।
71. वर्ष भर में कम से कम 100 शिविरों का आयोजन।
72. संघ के पुराने परिवारों, उनके दूरस्थ रहने वाले सदस्यों के साथ ही नूतन सम्पर्क वाले व्यक्तियों/परिवारों को संघ से जोड़ने का प्रयास।
73. संघ के प्रत्येक परिवार में जिनवाणी सदस्यता।
74. जोधपुर विश्वविद्यालय व अन्य सम्भव विश्वविद्यालयों में आचार्य हस्ती जैन चेयर की स्थापना।
75. संघ की सभी शाखाओं में वर्ष भर नियमित आयम्बिल।
76. 'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' प्रश्न प्रतियोगिता।
77. वर्ष में कम से कम तीन दिन विहार-सेवा में भाग लेना/पूज्य संत-सतीवृन्द की सेवा में धर्माराधन करना।

बच्चों के लिए संकल्प-सूत्र

78. प्रतिदिन माता-पिता व बड़ों का चरण-स्पर्श।
79. किसी से भी मिलने पर जय जिनेन्द्र से अभिवादन।
80. भोजन में जूठा नहीं डालना।
81. प्रतिदिन जागते वक्त व सोते वक्त 11 नवकार मंत्र का स्मरण करना।
82. प्रतिदिन 10 मिनट मौन रखना।
83. बिना पूछे किसी अन्य व्यक्ति की कोई वस्तु नहीं लेना।
84. जानबूझकर किसी भी चलते-फिरते प्राणी को नहीं मारना, नहीं सताना।
85. सत्य व प्रिय बोलना।
86. किसी को गाली-गलौच या असभ्य वचन नहीं बोलना।
87. महीने में.....बार संत-सती के दर्शन करना।
88. सप्ताह में एक दिन सामायिक करना।
89. प्रतिदिन.....घंटे से ज्यादा टी.वी. नहीं देखना।
90. खाना खाते वक्त टी.वी. नहीं देखना।

91. किसी की निन्दा, चुगली नहीं करना।
92. महीने में .....रुपये अच्छे कार्य के लिये खर्च करना।
93. महीने में .....दिन रात्रि भोजन नहीं करना।
94. होली पर रंग नहीं खेलना।
95. दीपावली पर पटाखे नहीं छोड़ना।
96. सप्ताह में 1/2 घंटे बीमार अथवा बुजुर्गों की सेवा करना।
97. किसी से झगड़ा हो जाने पर क्षमा करें (Sorry) कहकर क्षमा माँगना।
98. बाथटब/स्वीमिंग पुल में स्नान नहीं करना।
99. जन्मदिन पर गरीबों को भोजन कराना।
100. मंजन करते समय पानी गिलास में भरकर काम लेना (नल से नहीं)

आज से एक शंती पूर्व उन महनीय साधक का जन्म दिनांक 13 जनवरी 1911 को हुआ। मकर सक्रान्ति के ठीक एक दिन पूर्व उनका जन्म जीवन में दक्षिणायन से उत्तरायण की ओर बढ़ने के साथ, 'तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा सद्गमय' के पावन संदेश का प्रतीक था। आइये! आप हम सब यह संकल्प करें कि हम अपने जीवन में मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय व अशुभयोग का त्याग कर सम्यक् चिन्तन, संवर, निर्जरा, सरलता, सौहार्द, औदार्य एवं प्राणिमात्रहिताय का प्रशस्त पथ चयन कर दृढ़ता के साथ आगे कदम बढ़ायें। अध्यात्म चेतना के पुरोधा उस महापुरुष के इस शताब्दी प्रसंग पर समुपस्थित इस 'अध्यात्म चेतना वर्ष' में हम में से कोई भी व्यक्ति रीता न रह जाये।

हम स्वयं व्रत ग्रहण कर साधना में आगे बढ़ें, हमारे साथी भाई-बहिनों, परिजनों को भी व्रतग्रहण की प्रेरणा करें, हम सबका जीवन आलोकित हो, प्रशस्त हो, इस भावना से सम्पूर्ण मनोयोग से इस मंगलमय आध्यात्मिक अनुष्ठान में भाग लें।

समिति के 'गुरुचरणरजकृपाकांक्षी' कार्यकर्ता सदा आपके सहयोग हेतु उपस्थित है। उन्हें आप सबका स्नेहिल सहयोग व मंगलमय आशीर्वाद मिले, इसी अपेक्षा के साथ।

आचार्य हस्ती शताब्दी समिति के
सभी सदस्यगण

आचार्य हस्ती शताब्दी समिति

संयोजक	-	श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना-जोधपुर	0291-2434355
			09414093147
संयुक्त संयोजक	-	श्री अशोक जी कवाड़-चेन्नई	09381041097
सह संयोजक	-	श्री भरत जी सांखला-बैंगलोर	09980819669
		श्री हस्तीमल जी डोसी-मेड़ता सिटी	09413368997
		श्री कुशल जी गोटेवाला-स.माधोपुर	09460441570
		श्री कंवरलाल जी सिंघवी-जलगाँव	09822092962
		श्री मानेन्द्र जी ओस्तवाल-जोधपुर	09414132521
		श्री महावीरचन्द जी जरगड़-जयपुर	0141-2573306
		श्री नरेन्द्र जी हीरावत-मुम्बई	09821040899
		श्री पदमचन्द जी कोठारी-अहमदाबाद	09427070707
		श्री राजकुमार जी गोलेछा-पाली	09829020742
		श्री सुधीर जी सुराणा-चेन्नई	09380997333
		श्री सुरेश जी कोठारी-जयपुर	09314501627
महासचिव	-	श्री जगदीशमल जी कुम्भट-जोधपुर	09928023063
		श्री नवरतन जी डागा-जोधपुर	09828032215
सचिव	-	श्री आनन्द जी चोरडिया-चेन्नई	09884050003
		श्री ओमप्रकाश जी बांठिया-बालोतरा	09414108015
		श्री लोकेश जी कुम्भट-जोधपुर	09828027770
		श्री महेन्द्र जी सुराणा-जोधपुर	09414921164
		श्री नेमीचन्द जी कर्णावट-भोपालगढ़	09413062049
		श्री शैलेश जी डोसी-जोधपुर	09414100439
		श्री सुमति जी मेहता-पीपाड़ सिटी	09414462729
		श्री श्रीपाल जी देशलहरा-हैदराबाद	09391100974
		श्री सुरेश जी जैन-कुश्तला	09414553142
		श्री वसंत जी मरलेचा-बैंगलोर	09845169430

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. धर्मचन्द जैन

परमात्म मार्गदर्शक- पूज्य श्री अमोलकऋषिजी ***प्रकाशक*** - श्री अमोल जैन ज्ञानालय, 1755/56, गली नं. 2, धुले-424001, दूरभाष-02562-237923, ***पृष्ठ***-14+384 ***मूल्य***- 60 रुपये, ***चतुर्थ आवृत्ति***- सन् 2009

पूज्य अमोलकऋषि जी (विक्रम संवत् 1933-1993) ने आगमों के अनुवाद का महत्त्वपूर्ण कार्य करने के साथ अनेक उपयोगी ग्रन्थों का लेखन किया। 'परमात्म मार्गदर्शक' पुस्तक में पूज्यश्री ने ज्ञाताधर्मकथा सूत्र में उल्लिखित तीर्थंकर गोत्र के 20 बोलों को आधार मानकर विस्तार से अर्हन्त गुणानुवाद, सिद्ध गुणानुवाद, प्रवचन गुणानुवाद, गुरु गुणानुवाद, स्थविर गुणानुवाद आदि 21 प्रकरण लिखे हैं। लेखन में विभिन्न आगमों को आधार बनाया गया है। तीर्थंकर गोत्र के 20 बोल परमात्मा बनने के मार्ग हैं। इनके माध्यम से भी सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक् चारित्र एवं सम्यक् तप का आराधन हो जाता है।

जैन तत्त्व प्रकाश- पूज्य श्री अमोलकऋषिजी ***प्रकाशक*** - श्री अमोल जैन ज्ञानालय, 1755/56, गली नं. 2, धुले-424001, दूरभाष-02562-237923, ***अन्य प्राप्ति स्थल***-जैन साहित्य एवं उपकरण भण्डार, 1296, कटरा धुलिया, चांदनी चौक, दिल्ली-110006, फोन नं. 011-23919370 ***पृष्ठ***-12+560 ***मूल्य***- 70 रुपये, ***इक्कीसवीं आवृत्ति***- सन् 2009

पूज्य अमोलकऋषि जी की कृति 'जैन तत्त्व प्रकाश' अत्यन्त उपयोगी एवं लोकप्रिय है, यह इसकी 21वीं आवृत्ति से सिद्ध हो रहा है। साध्वी युगल निधि-कृपा के द्वारा इस पुस्तक पर विशाल स्तर पर प्रतियोगिता का आयोजन होने के पश्चात् अधिकांश-जन इस पुस्तक के वैशिष्ट्य से परिचित हो चुके हैं। पुस्तक के प्रथम खण्ड के 5 प्रकरणों तथा द्वितीय खण्ड के छह प्रकरणों में लोक, अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, नवतत्त्व, मिथ्यात्व, सम्यक्त्व, श्रावकाचार, संलेखना-संथारा आदि विविध विषय विवेचित हैं।

रिपोर्ताज

ब्यावर वर्षावास का योग
जीवन सूत्रों का एक अभिनव प्रयोग

श्री सम्पतराज चौधरी, दिल्ली एवं श्रीमती मंजू भंडारी, ब्यावर

संतों के दर्शन, वन्दन एवं प्रवचन अन्तर्मन में शुभ-भावों की सृष्टि करते हैं। वर्षावास का काल संत-सतियों के सान्निध्य में बोध पाने का एक उत्तम समय है। यह विशिष्ट साधकों के लिए एवं सामान्य जनों के लिए व्रत, नियम एवं आत्म-साधना के लिए अनुकूल होता है। संघनायक पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के आशीर्वाद एवं कृपाप्रसाद से इस वर्ष सन् 2009 का पूज्य उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 6 का ब्यावर चातुर्मास ब्यावर प्रवासियों के लिये एक स्वर्णिम प्रभात के रूप में उनके आंगन में उतरा। उपाध्यायप्रवर शांत-दांत, आत्म-साधना में रत, प्रज्ञा, करुणा एवं प्रेम की प्रतिमूर्ति हैं। हर व्यक्ति उनके सरल, सौम्य एवं सात्त्विक जीवन से अत्यन्त प्रभावित हुआ है। उनके मुखमंडल पर सदैव आनन्द की आभा के दर्शन होते हैं। पूज्यवर को जब भी वंदन कर सुख-साता की पृच्छा करते हैं तो उनके वरदहस्त के साथ वाणी से एक ही ध्वनि होती है- 'आनन्द है!' वास्तव में गुरुदेव आनन्द के धाम ही हैं। उनके दर्शन से जीवन का अमृत मिलता है।

यों तो पूज्य गुरुदेव का जीवन ही उनका उपदेश है, पर प्रवचन सभा में जब उनके प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला तो मन में परमानन्द की अनुभूति हुई। उनके प्रवचन संक्षिप्त लेकिन सारगर्भित होते हैं, जिनमें अनुभूति की सूक्ष्मता है, चिन्तन की गम्भीरता है। वे शान्तरस से आपूरित एवं सामान्यजनों के लिये भी बोधगम्य हैं। उनका अध्ययन अत्यन्त विशाल है, दृष्टि अत्यन्त व्यापक एवं उदार है। वे श्रोताओं के साथ सीधा संवाद स्थापित कर उन्हें अपने साथ ले चलने में सिद्धहस्त हैं। मध्याह्न में वे एक उत्कृष्ट गुरु-परम्परा का निर्वहन करते हुए साधु एवं श्रावक-श्राविकाओं को आगम वाचना प्रदान करते हैं, जिसमें श्रोताओं की जिज्ञासाओं का समाधान दिया जाता है। उनके पास

स्थानीय एवं दूर-दूर से आये दर्शनार्थियों का तांता लगा रहता है। वे प्रत्येक को उसकी पात्रता के अनुसार व्रत, नियम एवं कुव्यसन के त्याग की प्रेरणा देते हैं। उपाध्याय भगवन्त के अचिन्त्य प्रभाव से अनेक व्यक्ति सदाचरण के पथ पर गतिमान हुए हैं।

उपाध्याय भगवन्त तो उपाध्याय भगवन्त ही हैं, उनके सहवर्ती साधु श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी, श्री यशवन्तमुनिजी, श्री लोकचन्द्र जी, नवदीक्षित श्री दर्शनमुनि जी एवं श्री जितेन्द्रमुनि जी उन्हीं का अनुसरण करने वाले संयम पथिक हैं। इन सभी संतों के साध्वाचार, सेवा-परिचर्या, विनय, सरलता एवं निःस्पृहता देखकर सहज ही में अनासक्ति की भावना जाग्रत होती है। तृष्णा एवं विषय-भोगों से मुक्त होने का अवबोध मिलता है। इन संतों की निष्काम साधना, स्वानुशासन एवं मधुर व्यवहार से जन-जन के मन में इनके प्रति श्रद्धा एवं सम्मान के भाव गहरे पैठ गये हैं।

उत्कृष्ट संयमधारी, स्व-पर हित में रत ये संत अपने आपमें प्रेरणा के स्रोत तो हैं ही, लेकिन जब इनका प्रवचन सुनते हैं तो धर्मसभा में एक समवसरण का वातावरण उपस्थित हो जाता है। सभा ठसाठस भरी होती है एवं श्रोता ध्यानमग्न होकर प्रवचनामृत का पान करते हैं। नित्य चलने वाली प्रवचन-शृंखला का प्रारम्भ श्री यशवन्तमुनि जी की उदात्त वाणी से होता है। आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. का सभी जैन संत-सतियों से आग्रह रहता था कि वर्षावास में विशेषकर, उनके प्रवचन आगम-शास्त्र पर आधारित हों, ताकि जन-जन को प्रभु के साक्षात् वचनों के श्रवण का लाभ मिले एवं आगम-ज्ञान की गंगा अबाध बहती रहे। अपने प्रवचनों में उपाध्याय भगवन्त के अलावा भी सभी संत इस परम्परा का यथोचित पालन करते हैं। श्री यशवन्तमुनि जी के प्रवचन आगमानुसार तात्त्विक ज्ञान से भरपूर बोधगम्य शैली में होते हैं। प्रतिदिन आगम से निःसृत सूत्र लेकर उसकी सरस रूप में विशद व्याख्या प्रस्तुत कर जीवनोत्थान के लिये विकारों को तजकर अनासक्त भाव से जीने का बोध प्रदान करते हैं।

श्रद्धेय श्री गौतममुनि जी म.सा. के सुमधुर प्रवचनों में आत्म-विकास के साथ जन-जागरण का उद्घोष रहता है। आपके प्रवचन दुरूह एवं बोझिल

भाषा से रहित सर्व-साधारण के लिये बोधगम्य, किन्तु अत्यन्त प्रभावशाली वाणी में जीवन को सफल एवं आनन्दमय बनाने हेतु उत्तम दृष्टान्तों, लोकोक्तियों एवं बोध-प्रधान गीतों की लड़ियों से अलंकृत होते हैं। उत्कृष्ट भक्ति एवं प्रेरणास्पद गीतों के साथ इनके प्रवचनों का माधुर्य युक्ति-युक्त वचनों के साथ श्रोताओं के हृदय में सीधा उतर जाता है। मुनिश्री की निरन्तर प्रेरणा रहती है कि संयम की नींव पर ही जीवन का भव्य प्रासाद खड़ा होना चाहिए अन्यथा धार्मिक क्रियाएँ तो होंगी, पर धर्म नहीं होगा। त्याग-तपस्या के फूल तो खिलेंगे पर उनमें सुवास नहीं होगी।

संतों के प्रवचन जीवन जीने की सही दिशा का परिज्ञान तो देते ही हैं एवं वे अनेक तरह से प्रभु वचनों को आत्मसात् करने के लिए अपनी-अपनी शैली में उन्हें प्रस्तुत करते हैं। इस वर्ष के वर्षावास की एक विशिष्ट बात यह भी रही है कि श्रद्धेय गौतममुनि जी प्रतिदिन जिस विषय पर अपना प्रवचन फरमाते उसी विषय का एक सरल व संक्षिप्त सूत्र प्रवचन के अंत में देते। अन्तर-चेतना को जाग्रत करने वाले इन जीवन-सूत्रों का चिन्तन एवं मनन करने के लिये माला के रूप में उनका पुनः पुनः आवर्तन करने की प्रेरणा देते। इसमें हमें साधना के नूतन एवं सार्थक प्रयोग की अनुभूति हुई, क्योंकि उस सूत्र का विवेचन अपने प्रवचनों में वे पहले से ही कर देते थे। अतः उन सूत्रों को माला के रूप में भावार्थ के साथ हृदयंगम करने में कोई बाधा नहीं होती थी।

महाराज साहब ने अपने प्रवचन में फरमाया- "ये सूत्र सांसारिक कामनाओं से मुक्ति दिलाने के सूत्र हैं। हमारी बुद्धि एवं मन पौद्गलिक सुखों में आसक्त है। यह मूर्छा ही परिग्रह है जो हमें अपने स्वरूप का बोध कराने में एक घनिष्ठ आवरण बनी हुई है। यही हमारे दुःखों का एवं भव-भ्रमण का कारण है। हम अपनी भोग-बुद्धि में ही भटक रहे हैं। इस भटकन से उबरने के लिये गूढ़ ग्रन्थों से निःसृत ये सूत्र अध्यात्म के नवनीत हैं, जिनका आसेवन रूपान्तरण की ऊर्जा देगा एवं जीवन को शान्त, सात्त्विक एवं निरामय बनायेगा। इन सूत्रों का चिन्तन अनुप्रेक्षाओं का चिन्तन है जो दिग्मूढ़ और दिशाहीन अन्तःकरण को प्रकाश किरण बन कर जगमगायेगा, जिसमें जीवन का कल्याणकारी पथ स्पष्ट दृष्टिगोचर होगा।

इन सूत्रों की माला जपते हुए इनके सद्भावों को चित्त में उतारें। यह मंत्र-जाप की तरह है। इसमें मात्र मौन रहकर या मंद-ध्वनि में केवल शब्दोच्चारण से संतुष्ट हो जाने की बात नहीं है, प्रत्युत इसके वाच्यार्थ को भी मन में प्रविष्ट करने की बात है। स्तोत्र पाठ के साथ भक्ति-भाव का हृदय में उद्भव नहीं हो तो उसका पूरा फल नहीं मिलता है। यही बात इन सूत्रों के चिन्तन पर भी लागू होती है। माला के रूप में पुनः पुनः इसका चिन्तन एवं मनन धीमे-धीमे संस्कार के रूप में अन्तर्मन में अधिष्ठित हो जाता है। मुनि श्री का कथन है कि शब्दों के वाच्यार्थ को मन में उतारने के लिये विचारों को केन्द्रित करना आवश्यक है ताकि मन के विकल्प रुक जायें और अभ्यास के साथ निर्विकल्पता की दशा प्रकट हो। इन सूत्रों की माला अथवा जाप का यही प्रयोजन है।

विषय को अधिक स्पष्ट करते हुए महाराज साहब ने फरमाया कि उत्तराध्ययन सूत्र में मन को एक दुष्ट अश्व की संज्ञा दी गई है जो कुमार्ग में भागता ही रहता है। चंचल मन में विकल्प उठते ही रहते हैं। ये विकल्प आकुलता को जन्म देते हैं। यह आकुलता ही उद्विग्नता एवं तनाव बढ़ाती है जो असमाधि का कारण है। इस आकुलता से मुक्त होना ही आध्यात्मिक साधना-पद्धतियों का लक्ष्य होता है। इन सूत्रों का सतत चिन्तन एवं इनकी ओर विचारों का केन्द्रीकरण योग-साधना का प्रारम्भिक सोपान है। चेतना का किसी एक बिन्दु पर केन्द्रित होना ध्यान का सामान्य अर्थ है। जब हमारी चेतना रागात्मक भावों पर केन्द्रित होती है, अप्राप्त वस्तु की कामना या प्राप्त वस्तु के वियोग में चिन्तित होती है तो वह आर्त्तध्यान में डूब जाती है। अनुकूल विषयों के अवरोध से जब आक्रोश में आती है तो वह रौद्र स्वभाव में आ जाती है। वही चेतना जब स्व-पर हित के लिये कल्याणकारी विषयों पर स्थिर हो जाती है तो वह धर्म-ध्यान की अवस्था में आ जाती है। शान्ति और समाधि प्राप्त करने के लिये हमारे मन की गति राग से विराग की ओर होनी चाहिये। प्रशस्त विषयों के ध्यान को ही धर्म-ध्यान कह सकते हैं।

मुनिवर के इन सूत्रों में हमें तत्त्वों का प्रकाश मिला है। शान्ति हमारा स्वभाव है, पर विकल्पों की आँधी इसका निरन्तर घात करती रहती है। ये

विकल्प यदि रुक जायें तो पता चलेगा कि हम शान्त पहले से ही थे। शान्ति प्राप्त नहीं करनी होती है, बल्कि अशान्ति को दूर करना होता है। विकल्पों की गठरी का भार उतारेंगे तो शान्ति की अनुभूति हो जायेगी। इन विकल्पों के त्याग के लिये योग्यता के अनुसार निश्चित समय के लिये, शान्त परिवेश में माला के रूप में एकाग्र होकर यदि चिन्तन किया जायेगा तो एक अतीव शान्ति की अनुभूति होगी।

इस वर्षावास में साधक-साधिकाओं ने इन सूत्रों के पुनः पुनः चिन्तन का प्रयोग किया है एवं धर्म-ध्यान की ओर पग भरने के सार्थक प्रयत्न कर आनन्द की अनुभूति की है। ऐसे संतों का सान्निध्य बार-बार मिलता रहे, मन में यही अभिलाषा घर कर गई है। अब चातुर्मास अपनी समाप्ति की ओर है और हमारे कृतज्ञ मन में इन संतों के प्रति अहोभाव के आँसुओं का दौर है।

जब से चातुर्मासिक प्रवेश किया तब से आज तक जो सूत्र मनन के लिए दिये उनका संकलन यहाँ अविकल रूप से सार रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। आशा है पाठकों के लिए ये उपयोगी सिद्ध होंगे।

1. मैं संत बनूँ, मैं शांत बनूँ।
2. मुझे आराधक बनना है।
3. अरिहन्त की आज्ञा ही मेरा धर्म है।
4. जिनवाणी जग कल्याणी।
5. संयम ही सच्चा मार्ग है।
6. मुझे जन्म-मरण से मुक्त होना है।
7. करेंगे धर्म, टूटेंगे कर्म।
8. कुछ नहीं करना, पाप से डरना।
9. मैं सिद्ध स्वरूप हूँ।
10. मित्ती मे सव्वभूएसु।
11. संयम ही जीवन है।
12. छोड़ो अहं, पाओ अर्हम्।
13. पाओ आगम ज्ञान, मिटाओ अज्ञान।
14. हे जीव तू शांत रह।
15. सब कुछ सहना वापस कुछ न कहना।
16. क्षमा ही समाधान है।
17. सुसाहुणो गुरुणो।
18. गुरु ने राह दिखाई, अभी चलना है बाकी।
19. गुरु का सहारा संसार का किनारा।
20. मुझे ज्ञान-क्रिया का आराधक बनना है।
21. मैं कुछ नहीं, मेरा कुछ नहीं।
22. संसार खारा ज़हर है, संयम में लीला लहर है।
23. जिनवाणी का दीप जलाऊँ।
24. मैं शरीर नहीं, आत्मा हूँ।
25. वीतरागता मेरा धर्म है।

26. मुझे अरिहन्त बनना है।
27. राग बंधन है, वीतरागता मुक्ति है।
28. आराधकता ही सच्ची साधना है।
29. हे आत्मन्! अपने घर आओ।
30. जावे सो मेरा नहीं, मेरा सो जावे नहीं।
31. स्वयं को निहारो, स्वयं को निखारो।
32. आत्म-आराधना ही लक्ष्य मेरा।
33. अप्पाणं सरणं गच्छामि।
34. धम्मं सरणं गच्छामि।
35. संसार असार है, संयम में सार है।
36. अहंकार का भाव न रखूँ।
37. शील जीवन का शृंगार है।
38. मुझे कुछ नहीं चाहिये।
39. दया ही मोक्ष का द्वार है।
40. मैं दोष तजूँ, मैं रोष तजूँ।
41. मैं ज्ञान का आराधक बनूँ।
42. तू तेरा सम्भाल, छोड़ के सब जंजाल।
43. मैं धर्म के कार्य में प्रमाद नहीं करूँगा।
44. देह विनाशी मैं अविनाशी।
45. मैं कौन हूँ?
46. मैं सिद्ध-स्वरूपी आत्मा हूँ।
47. ढाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पण्डित होई।
48. मेरा जीवन करुणामय बने।
49. मुझे स्वतंत्र बनना है।
50. मैं पर्युषण में प्रमाद नहीं करूँगा।
51. मैं गुण-ग्रहण करूँगा, दोष तजूँगा।
52. मैं माता-पिता व गुरु का आदर करूँगा।
53. यह तन भिन्ना, चेतन भिन्ना।
54. सबसे मैत्री सबसे प्रेम।
55. अरिहन्त ही मेरे आराध्य देव हैं।
56. मैं दृढ़धर्मी बनूँ।
57. मेरा हर दिन संवत्सरी पर्व हो।
58. बढ़े मित्रता मिटे शत्रुता।
59. प्राणिमात्र के प्रति दया ही मेरा धर्म है।
60. जो नमता है सो सबको गमता है।
61. आप भला तो जग भला।
62. मुझे मनमुखी नहीं गुरुमुखी बनना है।
63. सरलता ही मानव की पहचान है।
64. मेरा व्रत में दृढ़ विश्वास रहे।
65. आगम-वाणी, सदा कल्याणी।
66. वो दिन धन्य होसी जद लेस्यूं संयम धार।
67. मेरा धर्म पर दृढ़ विश्वास रहे।
68. मुझे जगत् का नाथ बनना है।
69. लघुता से प्रभुता मिले।
70. समयं गोयम! मा पमायए।
71. मति सुधारूँ, गति सुधारूँ।
72. लक्ष्य बनाऊँ, कदम बढ़ाऊँ, मंजिल पाऊँ।
73. भव सुधारूँ, भाव सुधारूँ।
74. आत्मशुद्धि ही मेरा लक्ष्य है।
75. सरलता सिद्धि का बीज है।
76. बढ़े भावना मिटे कामना।
77. तप को साधूँ, धर्म आराधूँ।
78. सिद्धि ही मेरा ध्येय है।
79. संयम ही जीवन है।
80. ममता त्यागूँ, समता धारूँ।

81. मैं सहज बनूँ, मैं सरल बनूँ।
82. बहे मेरे भीतर करुणा का झरना।
83. सत्य ही भगवान् है।
84. मोह त्यागूँ, मोक्ष साधूँ।
85. नहीं सताऊँ किसी जीव को।
86. प्रेम जगाऊँ सब जीवों पर।
87. पाऊँ ज्ञान करूँ खुद की पहचान।
88. सत्य को पाऊँ, सत्य को जानूँ।
89. मिटे कुटिलता बढ़े सरलता।
90. मनो विजेता जग के विजेता।
91. कषाय शत्रु को दूर भगाऊँ।
92. मुझे कर्मों पर विजय प्राप्त करनी है।
93. ज्ञाताद्रष्टा भाव जगाऊँ
94. सुख को सपना समझूँ, दुःख को मेहमान।
95. जग का बंधन, दुःख का बंधन।
96. राग मिटाऊँ, वीतरागता जगाऊँ।
97. वीतराग को वंदन, तोड़ूँ राग का बंधन।
98. हे प्रभु वैराग्य से वीतरागता पाऊँ।
99. पाप निवारूँ, जीवन सवारूँ।
100. तृष्णा त्यागूँ, संतोष धारूँ।
101. इच्छाओं का जाल, काटूँ तत्काल।
102. मोह मिटाऊँ, मुक्ति पाऊँ।
103. चाह घटाऊँ, चिन्ता मिटाऊँ।
104. संतोषामृत पिया करूँ।
105. तृष्णा त्यागूँ, संतोष धारूँ।
106. रखूँ आत्मस्मरण, मिटाऊँ जन्म-मरण।
107. बुझाऊँ कषाय की आग, बन जाऊँ वीतराग।
108. छोड़ूँ मान, पाऊँ निर्वाण।
109. सरल सत्य व्यवहार करूँ।
110. छोड़ूँ मन का क्लेश, छोड़ूँ ईर्ष्या द्वेष।
111. मेरा मन सधे मेरी भावना सधे।
112. जिनवाणी पर आस्था मोक्ष का है रास्ता।
113. जिनवाणी का ज्ञान, मेटूँ मोह अज्ञान।
114. कर्मों का करूँ अंत, मैं भी बनूँ अरिहन्त।
115. फैले प्रेम परस्पर जग में।
116. मन के हारे हार है, मन के जीते जीत
117. अन्तर को जगाऊँ, दुःख दूर भगाऊँ।
118. करूँ आत्मज्ञान, बन जाऊँ भगवान्।
119. धारूँ चारित्र, बन जाऊँ पवित्र।
120. तू सो प्रभु, प्रभु सो तू है।
121. कर्म खपाऊँ, सिद्धि पाऊँ।
122. संसार से विरक्ति हो, संयम में अनुरक्ति हो।
123. चेतन चेत, भव दुःख मेट।
124. अन्तर मोड़ूँ, अन्तर मेटूँ।
125. धर्म ही सच्चा सार है, भव्यों का आधार है।
126. गुरुदेव का नाम, जपूँ सुबह शाम।
127. चतुर्दशी की यही प्रेरणा, गुरुवचनों की करुँ पालना।
128. पूरा हो गया चातुर्मास, पूरी हो मुक्ति की प्यास।

समाचार-विविधा

विशिष्ट रहा पालड़ी-अहमदाबाद का यह वर्षावास

परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा., महान् अध्यवसायी श्री महेन्द्र मुनि जी म.सा. आदि ठाणा 9 तथा **व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 16** का गुजरात की धर्मधरा पर यह वर्षावास विशिष्ट रहा है। आचार्य हेमचन्द्र ने गुजरात के राजा कुमारपाल के माध्यम से अहिंसा एवं जैनधर्म का प्रभावी प्रचार किया। स्थानकवासी परम्परा का बीज भी गुजरात के अहमदाबाद में लोंकाशाह द्वारा बोया गया था। गुजरात में श्वेताम्बर जैन परम्परानुयायियों का बाहुल्य है। तपागच्छ, खरतरगच्छ आदि श्वेताम्बर मूर्तिपूजक परम्पराओं का यहाँ विशेष प्रभाव रहा। बरवाला सम्प्रदाय, अजरामर सम्प्रदाय आदि स्थानकवासी परम्पराओं का भी गुजरात में अच्छा प्रभाव है। तमिलनाडु, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र की धरा को पावन करते हुए आचार्यप्रवर पूज्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज ने मारवाड़ की ओर अभिमुख होते समय गुजरात की औद्योगिक नगरी अहमदाबाद में श्रद्धानिष्ठ भक्तों के निवेदन पर पालड़ी उपनगर में वर्षावास की स्वीकृति प्रदान की।

एलिसब्रिज जैन स्थानक में धर्म-ध्यान का ठाट लगा। संत कहीं भी हों, भक्त वहाँ अपने आप खिंचे चले आते हैं। बाहर से आते हैं और स्थानीय भी आते हैं। स्थान की पावनता, भक्तों की भावना एवं संघ-व्यवस्था को देखते हुए आचार्यप्रवर ने व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 16 के चातुर्मास भी अहमदाबाद को स्वीकृत किए, उनमें से 12 महासती पालड़ी के पूर्व स्थानक में आचार्यप्रवर से नातिदूर विराजे तथा 4 महासतियाँ (प्रतिमाह सिंघाड़ा परिवर्तन के साथ) मणिनगर स्थानक में धर्माराधन हेतु सन्नद्ध रहीं। प्रार्थना, प्रवचन, दोपहर पश्चात् आगम-वाचना, सायंकाल प्रतिक्रमण आदि के साथ निरन्तर ज्ञान-चर्चा एवं धर्म-चर्चा का वातावरण बना रहा। श्री टीकमचन्द जी हीरावत-जयपुर, श्री उमरावमल जी सुराणा-चेन्नई, श्री उगमचन्द जी कांकरिया-चेन्नई, श्री ललित जी गोलेच्छा आदि कई श्रावकों ने वर्षावास में चौका करके

धर्माराधना का पूर्ण लाभ लिया।

गुजराती परम्परा का स्थानक एवं मारवाड़ी बन्धु का मात्र एक घर होते हुए भी चातुर्मास यशस्वी रहा। गुजराती बन्धु प्रार्थना, प्रवचन-श्रवण एवं धर्माराधना का यथावसर लाभ लेते रहे। स्थानीय बन्धुओं का मन्तव्य है कि सामायिक, संवर, पौषध, प्रतिक्रमण आदि गुजराती परम्परा के पालड़ी स्थानक में गत 45 वर्षों में इस वर्ष सर्वाधिक हुए हैं। महासती श्री मुक्तिप्रभा जी (41 दिवस), महासती श्री उदितप्रभा जी, महासती श्री ऋद्धिप्रभा जी के मासखमण से लोगों की प्रतिक्रिया है कि सन्त-सतियों के 3 मासखमण रत्नसंघ में प्रथम बार आचार्यप्रवर की सन्निधि में हुए हैं। 6 एवं 6 से ऊपर की लगभग 100 तपस्याएँ हो चुकी हैं। रत्नसंघ के इतिहास पर दृष्टिपात किया जाए तो 9 सन्तों एवं 16 महासतियाँ, इस प्रकार 25 सन्त-सतियों का चातुर्मास भी प्रथम घटना है।

22 से 28 सितम्बर तक शिविर समिति द्वारा प्रथम शिविर का आयोजन भी अहमदाबाद में हुआ, जिसमें सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष श्री पी. शिखरमल जी सुराणा, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के महामंत्री श्री नवरतन जी डागा सहित अनेक पदाधिकारियों ने भाग लेकर ज्ञानार्जन किया एवं एक मिसाल कायम की। अब तक आयोजित स्वाध्याय-शिविरों की परम्परा में यह विशिष्ट रहा, जिसमें अध्यापन भी वैविध्यपूर्ण रहा। निर्वाण दिवस के पश्चात् प्रतिपदा को गुजराती परम्परा के अनुसार नूतन वर्षाभिनन्दन पर आचार्यप्रवर ने गौतम गणधर के वैशिष्ट्य पर प्रवचन कर मंगलपाठ सुनाया तब विशाल उपस्थिति से हॉल खचाखच भरा था।

चातुर्मास प्रवेश से ही दशवैकालिक सूत्र की गाथा 'धम्मो मंगलमुकिट्ठं' पर प्रवचन हुए। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी, श्री योगेशमुनि जी, श्री मनीषमुनि जी के प्रवचन तो हुए ही, आचार्यप्रवर ने भी यहाँ 25 से अधिक प्रवचन फरमाए। स्थानीय लोगों ने व्यसन-मुक्ति, विवाह में रात्रि-भोजन आयोजन एवं तपस्या के उपरान्त आरम्भ-समारम्भ करने के त्याग किए। इससे तपस्या के पश्चात् आयोज्य भोज के निमन्त्रण भी निरस्त कर दिए गए।

इस चातुर्मास में देखने को मिला कि एक चातुर्मास की व्यवस्था बिना किसी समिति के एक परिवार के चार सदस्य भी सुचारू रूप से सम्हाल सकते हैं। श्रावकरत्न श्री पदमचन्द जी कोठारी एवं आवश्यकतानुसार उनके परिवारजन 24

घंटे स्थानक भवन में उपलब्ध रहे। कोठारी जी प्रवेश द्वार के समीपस्थ कक्ष में रात्रि-विश्राम करते थे, ताकि समागत की व्यवस्था समीचीन रूप से की जा सके। यहाँ प्रदर्शन एवं अपव्यय के बिना व्यवस्था का समुचित स्वरूप देखने को मिला। व्यवस्था सम्हालते हुए भी श्री कोठारी सा. ने प्रार्थना एवं प्रवचन का लाभ कभी नहीं छोड़ा। उनकी तन, मन और धन से समर्पण भावना श्लाघनीय है।

सम्पर्क सूत्र-श्री पदमचन्द जी कोठारी, फोन :079-26611448/094293-03088

आचार्य हस्ती-जयन्ती पालनपुर में

परमाराध्य परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. ने रविवार, 1 नवम्बर 2009 को पालड़ी-अहमदाबाद की प्रवचन सभा में आचार्य भगवन्त पूज्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की 100वीं जन्म-जयन्ती पालनपुर में साधु-मर्यादा के अनुसार स्वीकृत की है। जन्म-जयन्ती पौष शुक्ला चतुर्दशी 30 दिसम्बर 2009 को उपस्थित हो रही है। इस अवसर पर पधारने वाले श्रावक-श्राविका निम्नांकित सम्पर्क सूत्र पर पूर्व सूचना अवश्य दें।

सम्पर्क सूत्र- *श्री कांतिलाल जी कमलेश कुमार जी बाफना, 47, त्रिशला पार्क, अम्बिका नगर के पास, पालनपुर (गुजरात), फोन नं. 02742-251539, मो. 09428195829, 09427642750, 09898083329*

उपलब्धियों से परिपूर्ण रहा ब्यावर चातुर्मास

परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा., मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनि जी म.सा. आदि ठाणा 6 के सान्निध्य में यह चातुर्मास ज्ञान के प्रति रुचि, वैचारिक परिमार्जन एवं तप-त्यागपूर्ण जीवन की दृष्टि से विशेष उपलब्धिपूर्ण रहा। ब्यावर में उपाध्यायप्रवर का 20 वर्षों पश्चात् यह दूसरा चातुर्मास था। इस चातुर्मास में विभिन्न जैन सम्प्रदायों के सामूहिक समन्वय एवं सौहार्द की अनूठी मिसाल देखने को मिली। प्रवचन में पर्युषण पश्चात् भी उत्साह एवं उमंग के साथ विशाल उपस्थिति रही तथा प्रवचन में अधिकांश श्रावक-श्राविकाओं द्वारा सामायिक की आराधना का लाभ लिया गया। समीपस्थ एवं दूरस्थ ग्राम-नगरों के साथ सुदूर दक्षिण से भी दर्शनार्थियों का आवागमन रहा। सुश्राविका श्रीमती कौशल्या जी भण्डारी धर्मपत्नी स्व. श्री नवरतनमल जी भण्डारी

तथा 31 वर्षीय युवक श्री राहुल गाँधी द्वारा मासखमण तप का आराधन किया गया। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की दीक्षातिथि पर सामूहिक दयाव्रत का आराधन हुआ। बालकों का त्रिदिवसीय शिविर आयोजित हुआ, जिसमें श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की सदस्याओं द्वारा अध्यापन किया गया। पंचदिवसीय श्राविका शिविर में बहनों ने विशाल संख्या में भाग लिया। शिविर में श्रद्धेय श्री लोकचन्द्रमुनि जी द्वारा नवतत्त्वों की विवेचना की गई। चातुर्मास पर्यन्त प्रत्येक रविवार को धार्मिक पाठशाला में बच्चों ने ज्ञान-ध्यान सीखा। (ब्यावर चातुर्मास में अभिनव प्रयोग विषयक लेख इसी अंक में अलग से प्रकाशित है।)

महासती-मण्डल के चातुर्मासों में धर्माराधना

जोधपुर- साध्वीप्रमुखा शासनप्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरी जी म.सा. आदि ठाणा 6 के सान्निध्य में पर्युषण पश्चात् भी ज्ञानाराधन एवं संवर-आराधन का कार्यक्रम निरन्तर जारी रहा। 17 भाई-बहनों ने आयम्बिल की ओली पूर्ण की। लगभग 500 आयम्बिल तप हुए। दीपावली के अवसर पर तेले की अनेक तपस्याएँ हुईं। ज्ञानपंचमी पर्व एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के दीक्षा-दिवस पर धर्मचक्र सम्पन्न हुआ। प्रवर्तिनी श्री मदनकंवर जी म.सा. के स्मृति-दिवस पर विशाल संख्या में दयाव्रत का आराधन हुआ तथा 12 घंटे तक नवकारमंत्र का जाप चला। कार्तिक शुक्ला एकादशी को प्रवर्तिनी श्री लाडकंवर जी म.सा. का स्मृति-दिवस था, इस अवसर पर 85 भाई-बहिनों ने नीवी-व्रत किया और 12 घंटे तक अखण्ड रूप से नवकार मंत्र का जाप हुआ। कार्तिक शुक्ला द्वादशी को ज्ञान-दिवस, त्रयोदशी को दर्शन-दिवस, चतुर्दशी को चारित्र-दिवस और पूर्णिमा को तप-दिवस तथा लोंकाशाह जयन्ती मनाई गई।

भकरी- सेवाभावी महासती श्री संतोषकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में इस चातुर्मास में तीन मासखमण, 6 अठाई एवं 13 तेले तप हुए हैं। छोटे से ग्राम में तीन मासखमण का होना धर्म के प्रति एकनिष्ठ समर्पण का सूचक है। पर्युषण में यहाँ निरन्तर आठ दिन नवकार मंत्र के जाप हुए। नीवी, आयम्बिल आदि तप भी सम्पन्न हुए। प्रत्येक रविवार को धार्मिक ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन हुआ। प्रवचन में जैनेतर भाई-बहिनों की भी बराबर उपस्थिति रही। सामायिक-प्रतिक्रमण, 25 बोल आदि का भी बालक-बालिकाओं, युवक-युवतियों ने ज्ञान प्राप्त किया।

लक्ष्मीनगर, जोधपुर- तत्त्वचिन्तिका महासती श्री रतनकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 4 के चातुर्मास में आसपास की 21 कॉलोनियों के श्रावक-श्राविकाओं ने प्रवचन में जिनवाणी का पान किया। बहनों एवं बालिकाओं ने सामायिक, प्रतिक्रमण, 25 बोल एवं थोकड़े में अच्छी रुचि ली। दया, संवर, उपवास एवं पौषध के प्रायः प्रतिदिन नियम हुए, वहीं बहनों ने भिक्षुदया कर उत्साह प्रदर्शित किया। चार माह प्रत्येक रविवार को एक घंटे धार्मिक संस्कार शिविर चला। धर्मचक्र, पचरंगी, नवरंगी के आयोजनों में सबकी भागीदारी प्रेरणादायी रही। आचार्य श्री हीराचन्द्र जी महाराज का दीक्षा-दिवस तप-त्याग के साथ मनाया गया। कार्तिक शुक्ला एकादशी को प्रवर्तिनी श्री लाडकंवर जी म.सा. के स्मृति-दिवस पर उनका गुणानुवाद किया गया।

मलाड़-मुम्बई- विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा 5 का एवरशाइन नगर, मलाड़ पश्चिम में ज्ञानाराधना की दृष्टि से चातुर्मास स्थानीय लोगों के लिए उपलब्धि पूर्ण रहा। तपस्या की दृष्टि से तीन मासखमण, 41 तेले, 6 पचोले एवं 4 ग्यारह की तपस्याएँ हुईं। पर्युषण तक व्याख्यान के पश्चात् प्रतिदिन 1 घंटे का जाप एवं पर्युषण के आठ दिन तक अखण्ड जाप हुआ। 17 से 19 अगस्त तक बालक-बालिकाओं का एक त्रिदिवसीय शिविर आयोजित किया गया, जिसमें सामायिक, प्रतिक्रमण एवं 25 बोल सिखाए गए। पर्युषण के आठ दिनों में प्रतिदिन एक धार्मिक परीक्षा रखी गई। आयम्बिल ओली अच्छी संख्या में हुई। भक्तामर-स्तोत्र का अर्थ सहित अभ्यास करवाया गया। पर्युषण के दौरान बच्चों के लिए ज्ञानाराधन का कार्यक्रम रखा गया, जिसमें सामायिक सूत्र, प्रतिक्रमण, 25 बोल एवं दशवैकालिक के एक अध्ययन का अभ्यास करवाया गया। आचार्यप्रवर का दीक्षा दिवस तीन एवं पाँच सामायिक के साथ मनाया गया। सामूहिक एकाशन का भी आयोजन रखा गया। तीन मासखमण तप करने वाले भाई-बहिन हैं- श्रीमती संगीता जी विकास जी कांकरिया, श्रीमती सुशीला जी सुन्दरलाल जी हीरण, श्रीमान् धर्मेन्द्र जी लोढ़ा (मौन सहित)।

कोटा- विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में कोटा का यह दूसरा चातुर्मास है। पर्युषण के पश्चात् भिक्षु दया का आयोजन हुआ तथा शरदपूर्णिमा पर 50-60 श्राविकाओं ने 15-15 सामायिकें की। यहाँ अष्टमी एवं रविवार को विशेष धर्माराधना होती है। महासती मण्डल के

सान्निध्य में 21 से 26 अक्टूबर को आध्यात्मिक संस्कार शिविर आयोजित किया गया। जिसमें आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की परीक्षा हेतु 43 आवेदन पत्र भरवाए गए। शिविर की रिपोर्ट अलग से इसी अंक में प्रकाशित है।

जयपुर- व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुबाला जी म.सा. आदि ठाणा 7 का चातुर्मास विशेष धर्मप्रेरणा का निदर्शन रहा। चातुर्मास में चार मासखमण सम्पन्न हुए। अट्ठाईस, बीस, ग्यारह, नौ, आठ के साथ तेले आदि की अनेक तपस्याएँ एवं पचरंगी, नवरंगी की तपस्याएँ भी सम्पन्न हुईं। विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि तप-त्याग, सामायिक-स्वाध्याय, संवर आदि में 30 से 35 वर्ष के श्रावक-श्राविकाओं की रुचि अधिक रही। 4 अक्टूबर को संस्कार शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें 400 शिविरार्थियों ने भाग लिया। महासती श्री मुदितप्रभा जी म.सा. के हृदयस्पर्शी सम्बोधन से सैंकड़ों लोगों ने हिंसा से युक्त साधनों का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उपयोग नहीं लेने का नियम लिया, इसी प्रकार शाकाहारी रहने एवं आत्महत्या न करने का भी नियम अंगीकार किया। आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. का दीक्षा-दिवस धर्मचक्र आराधना के साथ मनाया गया। श्राविकाओं ने महासती मुदितप्रभा जी से थोकड़ों का अध्ययन किया। व्याख्यान के पश्चात् युवकों को धर्मप्रेरणा करने का क्रम नियमित रहा। देश के विभिन्न क्षेत्रों से श्रद्धालुओं ने आकर धर्मलाभ लिया।

बैंगलोर- व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलता जी म.सा. आदि ठाणा 7 के सान्निध्य में ज्ञानाराधन एवं तपाराधन की भरपूर उपलब्धि रही। प्रातःकालीन 8 से 9 बजे की कक्षा में 80 से 90 यवुकों एवं श्रावक आदि ने महासती-मण्डल से धर्मचर्चा का लाभ लिया। युवकों का धर्म से जुड़ाव महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। तेले, अठाई तप एवं तीन मासखमण सम्पन्न हुए। चार दम्पत्ती आजीवन शीलव्रती बने। आचार्यप्रवर की दीक्षा जयन्ती पर 60 से अधिक श्रावक-श्राविकाओं ने पाँच-पाँच सामायिकें कीं।

पीपाड़ शहर- व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 के सान्निध्य में इस चातुर्मास में दो मासखमण, 15 दिवसीय दो तप, ग्यारह दिवसीय पाँच, दस दिवसीय 2, नौ दिवसीय 6 एवं 60 अठाई तप हुए। उपवास, बेला, तेला, पचोला एवं सात की भी तपस्याएँ हुई हैं। इनके अतिरिक्त सात एकासन, सिद्धि तप, दो दया मासखमण, 3 नीवी मासखमण, 40 एकासन

मासखमण, 6 धर्मचक्र, 6 दया/उपवास की पचरंगी, एक नवरंगी एवं 17 एकासन तप हुए हैं। युवकों एवं श्रावकों की सामूहिक दया एक साथ 100 से अधिक, भक्तामर तप, 51 आयम्बिल ओली तथा लगातार 38 एवं 39 आयम्बिल हुए हैं। शरदपूर्णिमा पर 15-15 सामूहिक सामायिक 130 श्रावक-श्राविकाओं ने की। नवकार मंत्र के सामूहिक जप अनेक बार हुए एवं चातुर्मास में 9 दिवसीय धार्मिक शिविर लगाया, जिसमें 90 बहिनों ने उत्साह से भाग लिया। दीपावली अवकाश में बालक-बालिकाओं का पाँच दिवसीय आयोजित हुआ। तपाराधन एवं ज्ञानाराधन दोनों दृष्टियों से यह चातुर्मास श्रेष्ठ रहा। प्रवचन की उपस्थिति अन्त तक सराहनीय रही। पाँच जैनेतर भाइयों ने भी बड़ी तपस्याएँ कीं। मन्दिरमार्गी, तेरापंथी आदि सम्प्रदायों के श्रावक-श्राविकाओं ने भी स्नेह एवं एकरूपता के साथ त्याग-तप के कार्यक्रम में भाग लिया।

राष्ट्रीय अध्यक्ष द्वारा दो शीर्ष पदाधिकारियों का मनोनयन

अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर के पुनः निर्वाचित राष्ट्रीय अध्यक्ष श्रीमान् सुमेरसिंह जी बोथरा ने कार्यकारिणी के दो शीर्ष पदों पर मनोनयन करते हुए श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल, चेन्नई को कार्याध्यक्ष एवं श्री पूरणराज जी अबानी, जोधपुर को महामंत्री के रूप में मनोनीत किया है। तीनों प्रमुख पदाधिकारियों के सम्पर्क सूत्र इस प्रकार हैं-

1. श्री सुमेरसिंह जी बोथरा, 301-पंचरत्ना, 3937, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर-302003(राज.), फोन नं. 0141-2568830(का.), 2620571(नि.), 9414048830
2. श्री गौतमचन्द जी हुण्डीवाल, 4/29, Shendy Road, Palawaram, Chennai-600043(T.N.), Ph. 044-22641554(O.), 22630941 (R.), 09444388565 (M.)
3. श्री पूरणराज जी अबानी, 'पूज्यकृपा', 32-बी, नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.), फोन नं. 0291-2740832(का.), 2432218 (नि.), 9314710985

कोटा में पंच दिवसीय शिविर सम्पन्न

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड तथा श्री वर्धमान जैन श्रावक संघ, कोटा के संयुक्त तत्त्वावधान में परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा-4 के सान्निध्य में 21 से 26 अक्टूबर 2009 तक श्रावक-श्राविकाओं एवं बालक-बालिकाओं का आध्यात्मिक संस्कार शिविर आयोजित किया गया। श्रावकों की प्रातः 7.00 से 9.00 बजे तक, बालक-बालिकाओं की 8.30 से 10.30 बजे तक, श्राविकाओं की 11.30 से 3.30 बजे तक कक्षाएँ प्रतिदिन सुचारू रूप से गतिमान रहीं। लगभग 70 शिविरार्थियों ने भाग लिया तथा शिक्षण बोर्ड की परीक्षा को ध्यान में रखते हुए अध्ययन करवाया गया तथा जनवरी-2010 की परीक्षा हेतु 43 फॉर्म भरवाये गये। शिविर में प्रश्नमंच, अन्ताक्षरी, वाद-विवाद, एकाग्रचित्तता की प्रतियोगिता भी करवायी गयी। ज्ञान पंचमी के दिन उपवास दिवस तथा आचार्य भगवन्त के दीक्षा दिवस को दया दिवस के रूप में मनाया गया, जिसमें लगभग 45 से अधिक शिविरार्थियों ने उपवास तथा दया आराधना की। प्रत्याख्यान के रूप में धोवन पानी का प्रयोग, ब्रेकरी के खाद्य पदार्थों का त्याग, प्रतिदिन सामायिक, स्वाध्याय सेवा, जैनत्व को सजीव रखने के नियम ग्रहण किये गये। शिविर में महासतियाँ जी म.सा. के अतिरिक्त तीन अध्यापकों के द्वारा अध्ययन कराया गया। शिविर का संचालन सुश्राविका श्रीमती सुनीता जी नवलखा, कोटा द्वारा किया गया।

पीपाड़ सिटी में बाल संस्कार शिविर सम्पन्न

व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 के पावन सान्निध्य में श्री जैन रत्न युवक परिषद्, पीपाड़ सिटी द्वारा पंचदिवसीय बाल संस्कार आध्यात्मिक प्रशिक्षण शिविर का आयोजन 11 से 15 अक्टूबर 2009 तक किया गया। शिविर में स्थानीय 110 बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। शिविरान्तर्गत चार कक्षाओं में विविध विषयों का अध्यापन श्री कमलेश जी बोहरा एवं श्रीमती पुष्पा जी मेहता द्वारा करवाया गया। बालकों को नैतिक व सामान्य संस्कारों हेतु व्याख्यात्री महासती श्री निःशल्यवती जी म.सा. द्वारा भी दोहो एवं विशिष्ट शैली में प्रेरणा की गयी। शिविर में सभी शिविरार्थियों ने पटाखे नहीं छोड़ने के नियम ग्रहण

किये, साथ ही 'डॉन्ट यूज मी' नाटिका का मंचन भी किया गया।

आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र द्वारा प्रोत्साहन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर द्वारा 11 सितम्बर को आयोजित कार्यक्रम में निम्नांकित पुरस्कार प्रदान किये गए-

1. सर्वश्रेष्ठ शाखा पुरस्कार- प्रथम : सिंहपोल केन्द्र, द्वितीय-कुड़ी भगतासनी केन्द्र।

2. सर्वश्रेष्ठ अध्यापक पुरस्कार- प्रथम : श्रीमती सुशीला गोलेच्छा/श्रीमती सूरज बोहरा, द्वितीय : श्री मुन्नालाल जी भण्डारी, तृतीय : सुश्री अनिता बोथरा।

3. सर्वश्रेष्ठ छात्रा- सुश्री अंजली सोनी-केन्द्र सिंहपोल

दीपावली के पूर्व विभिन्न केन्द्रों पर नन्हें-मुन्ने बालक-बालिकाओं ने पटाखे नहीं छोड़ने के संकल्प लिए।

अहिंसा इण्टरनेशनल पुरस्कारों हेतु प्रविष्टियाँ आमंत्रित

अहिंसा इण्टरनेशनल द्वारा वर्ष-2009 के निम्नलिखित पुरस्कारों के लिए प्रस्ताव आमंत्रित हैं-

1. अहिंसा इण्टरनेशनल डिप्टीमल आदीश्वरलाल जैन पुरस्कार (राशि 31000/-) जैन साहित्य के विद्वान् को उनके हिन्दी एवं अंग्रेजी के समग्र साहित्य अथवा कृति की श्रेष्ठता के आधार पर प्रदान किया जायेगा।
2. अहिंसा इण्टरनेशनल भगवानदास शोभालाल जैन शाकाहार, जीवदया एवं रक्षा पुरस्कार (राशि 21000/-) शाकाहार प्रसार तथा जीवदया एवं रक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रहे कर्मठ कार्यकर्ता को प्रदान किया जायेगा।
3. अहिंसा इण्टरनेशनल प्रेमचन्द जैन रोगी सेवा/चिकित्सा पुरस्कार (राशि 21000/-) यह पुरस्कार किसी भी डॉक्टर को उसके द्वारा चिकित्सा के क्षेत्र में रचनात्मक कार्य करने पर अथवा किसी भी संस्था को उसके द्वारा रोगी सेवा कार्य करने के आधार पर दिया जायेगा।
4. अहिंसा इण्टरनेशनल विजय कुमार प्रबोध कुमार सुबोध कुमार जैन पत्रकारिता पुरस्कार (राशि 21000/-) जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में रचनात्मक कार्य की श्रेष्ठता के आधार पर दिया जायेगा।

5. अहिंसा इण्टरनेशनल हरिश्चन्द रमेशचन्द जैन, जैन धर्म प्रचार-प्रसार पुरस्कार (राशि 11000/-) यह पुरस्कार किसी भी व्यक्ति को उसके द्वारा जैन धर्म के प्रचार-प्रसार हेतु श्रेष्ठ कार्य करने के आधार पर दिया जायेगा।
6. अहिंसा इण्टरनेशनल धनीचन्द्र देवेन्द्र कुमार जैन मेधावी छात्र पुरस्कार (राशि 11000/-) यह पुरस्कार दिल्ली, गाजियाबाद, नोयडा, फरीदाबाद व गुड़गाँव जनपद के दसवीं कक्षा में सी.बी.एस.ई/आई.सी.एस.ई की परीक्षा में कोर विषयों में अधिकतम अंक पाने वाले विद्यार्थियों को दिया जायेगा।

उपर्युक्त पुरस्कारों हेतु नाम का सुझाव स्वयं लेखक/कार्यकर्ता, संस्था अथवा अन्य कोई भी जानने वाला व्यक्ति 15 नवम्बर 2009 तक लेखक, कार्यकर्ता, संस्था के पूरे नाम व पते, जीवन परिचय संबंधित क्षेत्र में कार्य विवरण व पासपोर्ट आकार के दो फोटो सहित भेज सकते हैं। पुरस्कार दिल्ली में भव्य कार्यक्रम में सम्मानपूर्वक भेंट किये जायेंगे। सम्पर्क सूत्र- ए.के.जैन, महासचिव, जीवन विला, 111, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, मो. 09312401353

बाल-दीक्षा को केन्द्र सरकार ने किया मान्य

केन्द्र सरकार ने अधिकृत रूप से बालदीक्षा को मान्य कर दिया है। भारत की 15वीं लोकसभा में यह प्रस्ताव सर्वसहमति से पारित हुआ है, जिसका उल्लेख भारत के राजपत्र (Gagette) के भाग द्वितीय, खण्ड 3, उपखण्ड (1) में किया गया है। जो 13 जुलाई 2009 को प्रकाशित हुआ है। भारत की सभी अदालतें, सरकारें, सरकारी अधिकारी, पदाधिकारी, सरकारी व गैरसरकारी बाल विकास संस्थाएँ, सभी जिला-नगर-महानगर परिषदें, पालिकाएँ, ग्राम पंचायतें आदि सर्वजनों के लिए भारत सरकार के राजपत्र (दी गैजेट ऑफ इण्डिया) की आज्ञा परिपालनीय होती है। समूचे भारत में यह राजाज्ञा लागू होती है। इस राजपत्र की उद्घोषणा के कारण अब समग्र भारत में बालदीक्षा पर कोई कानूनी अथवा न्यायिक प्रतिबन्ध नहीं रहता है। जैन शास्त्र की दृष्टि से सुयोग्य किसी भी बालक अथवा बालिका को उसके माता-पिता अथवा अन्य अभिभावक की अनुमति से कोई अधिकारी गीतार्थ गुरु कहीं भी सार्वजनिक रूप से धूमधाम से दीक्षा दे सकते हैं।

उपाध्याय पुष्करमुनि के जन्म-शताब्दी समारोह पर अनेक कार्यक्रम

उपाध्याय श्री पुष्करमुनि जी के जन्म-शताब्दी महोत्सव का कार्यक्रम 11 अक्टूबर से प्रारम्भ हुआ। इस दिन देशभर में अनेक स्थानों पर धार्मिक, सामाजिक एवं सेवापरक कार्य आयोजित हुए। अशोक विहार, दिल्ली में उपाध्याय श्री रमेशमुनि जी म.सा., उपप्रवर्तक डॉ. राजेन्द्रमुनि जी म.सा. आदि के सान्निध्य में नवकार महामंत्र के जाप के साथ गुणानुवाद सभा आयोजित की गई, जिसमें श्रम कल्याण मंत्री श्री मंगतराम सिंघल, विधायक श्री हरिशंकर गुप्ता, श्री महेन्द्र नागपाल आदि अनेक अतिथि उपस्थित थे। उपाध्याय श्री रविन्द्रमुनि जी, भन्ते पारसमुनि जी, श्री कमलमुनि जी 'कमलेश', साध्वी डॉ. दिव्यप्रभा जी आदि का भी सान्निध्य प्राप्त था। इस अवसर पर 'साधना के शिखर : गुरु पुष्कर' एक जीवन गाथा नामक डाक्यूमेण्ट्री फिल्म का उद्घाटन किया गया, जिसका प्रसारण संस्कार टी.वी. पर 11 अक्टूबर को सायंकाल 5 से 5.40 बजे तक हुआ। डाक्यूमेण्ट्री फिल्म की डी.वी.डी. 09810186553 पर सम्पर्क कर निःशुल्क प्राप्त की जा सकती है। गुरु पुष्कर वाणी एवं संदेशों को देश-विदेश में प्रसारित करने हेतु www.gurupushkar.com नामक वेबसाइट का उद्घाटन भी किया गया। डॉ. राजेन्द्रमुनि जी की प्रेरणा से इस वर्ष 100 सेवा शिविर आयोजित करने की भी भक्तों ने घोषणा की।

उदयपुर में श्री गणेशमुनि जी शास्त्री ने कहा कि उपाध्याय श्री पुष्करमुनि जी कर्मयोगी, नवकार मंत्र के प्रबल पक्षधर एवं शिष्यों को शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ने की प्रेरणा देने वाले यशस्वी महापुरुष थे। इस अवसर पर अनेक सन्त एवं श्रद्धालु श्रावक-श्राविका उपस्थित थे। कार्यक्रम में राजस्थान विधानसभा के विधायक एवं पूर्व गृहमंत्री श्री गुलाबचन्द जी कटारिया ने उन्हें सच्चा साधक बताया। यहाँ विशिष्ट उपलब्धि प्राप्त विद्वानों, समाजसेवियों, चिकित्सकों आदि का सम्मान किया गया।

आचार्य श्री जवाहर व्याख्यानमाला का आयोजन

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर द्वारा श्री घेवरचन्द केशरीचन्द गोलछा जवाहर व्याख्यानमाला निधि के अन्तर्गत आचार्य श्री जवाहर व्याख्यानमाला का आयोजन 4 अक्टूबर 2009 को आचार्य श्री नानेश ध्यान

केन्द्र, उदयपुर में किया गया। इस वर्ष आचार्य श्री नानेश पुण्यतिथि दशाब्दी होने से व्याख्यान का विषय रखा गया- 'आचार्य श्री नानेश और समतादर्शन'।

व्याख्यानमाला के प्रेरणा पाथेय संघ के विश्वस्त मण्डल के सदस्य श्री सरदारमल जी कांकरिया, कोलकाता थे। जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर के संस्कृत-विभागाध्यक्ष एवं जिनवाणी मासिक पत्रिका के सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन प्रमुख वक्ता थे। मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर के दर्शनशास्त्र-विभागाध्यक्ष प्रो. एस.आर.व्यास मुख्य अतिथि थे। समारोह की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध साहित्यकार प्रो. नन्द चतुर्वेदी ने की। संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री सुन्दरलाल जी दुग्गड़-कोलकाता, महामंत्री श्री गौतम जी पारख-राजनांदगाँव ने भी सभा को सम्बोधित किया। प्रमुख वक्ता डॉ. धर्मचन्द जैन ने आचार्य श्री नानेश के समतादर्शन को आगमाधारित निरूपित करते हुए उसके समभाव एवं आत्मौपम्य भाव के रूप में दो स्वरूपों का निरूपण किया। डॉ. जैन ने समता समाज रचना हेतु 21 नियमों की विशद चर्चा की। कार्यक्रम में विद्वत्निर्माण प्रकल्प के छात्रों ने संस्कृत भाषा में स्वागत गीत प्रस्तुत किया।

जैन ई-लाइब्रेरी

जैन एज्युकेशन कमेटी एण्ड जैन ई-लाइब्रेरी ने विगत दो वर्षों से ई-लाइब्रेरी का अच्छा विकास किया है। इसकी वेबसाइट www.jainelibrary.org पर सम्पर्क कर पुस्तकें देखी एवं डाउनलोड की जा सकती हैं। प्रवीण के. शाह, +1919-859-4994।

संक्षिप्त समाचार

न्यूयार्क- न्यूयार्क के जैन परिवारों द्वारा पर्वाधिराज पर्युषण तप-साधना पूर्वक मनाया गया। आठों ही दिन सामायिक, प्रतिक्रमण एवं प्रवचन के माध्यम से धर्म-आराधना होती थी। श्रीमती वन्दना जी कोठारी ने मासखमण, श्रीमती मृदुला जी शाह ने ग्यारह की तपस्या की तथा अठाई, पचोले, चोले की तपस्याएँ भी हुईं।

दुर्ग- दीक्षार्थी भाई प्रमोद जी चौपड़ा सुपुत्र श्री भंवरलाल जी-राधादेवी चौपड़ा की भागवती दीक्षा कार्तिक बदि चतुर्थी दिनांक 8 अक्टूबर 09 को समता परिसर, ऋषभ नगर में आचार्य श्री रामेश के मुखारविन्द से सम्पन्न हुई।

जयपुर- महारानी फार्म, जयपुर के श्री नरेन्द्र जी कक्कड़ के नेतृत्व में 108 बकरे कसाइयों से छुड़ाकर मेड़ता सिटी स्थित बकराशाला भेजे गए।

बधाई/चुनाव

जयपुर- जैन धर्म-दर्शन के विद्वान्, चिन्तक एवं ध्यान-साधक श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा को विचार मंच, कोलकाता की ओर से 'गणेशललवानी सम्मान' से पुरस्कृत किया गया है। श्री सरदारमल जी कांकरिया ने 21000 की पुरस्कार राशि, प्रशस्ति-पत्र एवं शाल भेंट कर लोढ़ा साहब को सम्मानित किया।

उदयपुर- अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के संरक्षक श्री चाँदमल जी कर्णावट को सर्वोच्च कमेटी ऑफ नारायण अन्तरराष्ट्रीय महासंगठन, उदयपुर द्वारा राष्ट्रीय रत्न पुरस्कार एक विशाल समारोह में मानव-कल्याणार्थ की गई उत्कृष्ट सेवा के लिए प्रदान किया गया। श्री कर्णावट विगत अनेक वर्षों से नारायण सेवा संस्थान, उदयपुर को आर्थिक सहयोग प्रदान करते रहे हैं।

उदयपुर- सुश्री नेहा कर्नावट सुपुत्री श्री सूर्यप्रकाश जी एवं माया जी कर्णावट ने इजरायल के सर्वश्रेष्ठ Interdisciplinary Center College से BBA परीक्षा 88.8 प्रतिशत अंक प्राप्त कर उत्तीर्ण की है। यह उपलब्धि हासिल करने वाली यह पहली भारतीय लड़की है। सुश्री नेहा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के संरक्षक श्री चाँदमल जी कर्णावट की सुपौत्री है।

पाली- श्रीमती मीनाक्षी डागा धर्मपत्नी श्री नरेन्द्र जी डागा तथा सुपुत्री श्री केवलचन्द जी जैन एवं श्रीमती मनोहरदेवी जी जैन को राजस्थान विश्वविद्यालय ने 'भगवान् महावीर एवं उनसे पूर्व का जैन धर्म, दर्शन एवं संस्कृति' विषयक शोधकार्य के लिए पी-एच्.डी. की उपाधि प्रदान की। उन्होंने अपना शोधकार्य डॉ. पी. सी. जैन के निर्देशन में पूरा किया है।

जयपुर- श्री कनिका यश मेहता सुपुत्री श्री नरेन्द्र जी कक्कड़ को आयोजन स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर, जयपुर के डिजायन थीसिस प्रोजेक्ट में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने पर स्वर्णपदक से सम्मानित किया गया है।

अजमेर– युवारत्न श्री चन्द्रप्रकाश जी कटारिया सुपुत्र स्व. श्री छोटमल जी कटारिया (राजस्व अधिकारी नगर निगम, अजमेर) को राजस्थान सरकार ने सार्वजनिक निर्माण मंत्री श्री प्रमोद भाया (जैन) ने राजस्व आय में 290 प्रतिशत वृद्धि का कीर्तिमान स्थापित करने के उपलक्ष्य में 15 अगस्त 09 को जिला स्तर पर प्रशस्ति पत्र एवं प्रतीक चिह्न देकर उन्हें सम्मानित किया। श्री कटारिया श्री जैन रत्न युवक परिषद्, अजमेर के मंत्री भी रह चुके हैं।

चेन्नई– श्रीमती संगीता एम. बोहरा धर्मपत्नी श्री महेन्द्र जी बोहरा ने राजस्थान

विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त अपभ्रंश साहित्य अकादमी जैन विद्या संस्थान श्री महावीर जी(राज.) द्वारा आयोजित प्राकृत डिप्लोमा परीक्षा में अखिल भारतीय स्तर पर प्रथम स्थान अर्जित करते हुए स्वर्ण–पदक प्राप्त किया है। आपने पूर्व में श्री अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर द्वारा आयोजित दसवीं कक्षा की परीक्षा में सन् 2006 में भी प्रथम स्थान प्राप्त किया था। आप श्री हस्तीमल जी बोहरा (संघ अध्यक्ष, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पीपाड़ शहर) की पुत्रवधू हैं।

श्रद्धाञ्जलि

अध्यात्मरसिक श्री टीकमचन्द जी हीरावत नहीं रहे

जयपुर– दृढ़धर्मी, संघ–समर्पित एवं आध्यात्मिक रुचि सम्पन्न सुश्रावक श्री

टीकमचन्द जी हीरावत का 25 अक्टूबर 2009 को स्वाध्याय एवं धर्मचर्चा करते हुए प्रशमभावों में स्वर्गगमन हो गया। आचार्यप्रवर हस्ती एवं हीरा के चातुर्मासों में एवं यथासम्भव शेखेकाल में धर्म–साधना का लाभ लेने में ही अपना हित समझते थे। उन्होंने सन् 1985 से व्यापार–व्यवसाय से पूर्णतः निवृत्ति ले ली थी तथा स्वाध्याय, ध्यान एवं आत्म–चिन्तन को अपनी जीवनचर्या में विशेष महत्त्व देते थे। हीरावत साहब सरल स्वभावी थे तथा धर्म के मर्म को हृदयंगम करते हुए धर्मनिष्ठ जीवन जीने के लिए सन्नद्ध रहते थे। विगत 7–8 वर्षों से आपने अधिकतम समय आचार्य भगवन्त की सेवा में धर्माराधन करते व्यतीत किया। कई वर्षों तक आपने लाल भवन, चौड़ा रास्ता, जयपुर में ही संवर की आराधना की। चतुर्दशी को पौषध, अष्टमी आदि तिथियों को दयाव्रत की आराधना,

उभयकालीन प्रतिक्रमण तथा सामायिक व्रत की आप नियमित आराधना करते थे। घर में रहे या पुत्री के यहाँ अमेरिका, में आप प्रतिदिन 8-10 सामायिक कर ही लेते थे।

स्वयं के पुरुषार्थ से ही आपने व्यवसाय को उच्च स्तर तक पहुँचाया। श्री हीरावत साहब उदारमना सुश्रावक थे तथा सभी की तन-मन-धन से सहायता करते थे। आचार्य भगवन्त हस्तीमल जी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. व उपाध्यायप्रवर श्री मानचन्द्र जी म.सा. के विशिष्ट गुणों का स्मरण का मौका आता था तब भावविह्वल हो जाते थे। सन्त-मुनिराजों की सेवा करके हीरावत साहब ने उनके हृदय में स्थान बना लिया था। आपकी धर्मसहायिका का भी धर्मसेवाकार्य में विशेष सहयोग रहा।

आपने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के कार्याध्यक्ष पद को सुशोभित किया तथा आप श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान के उन्नयन के लिए सदैव तत्पर रहे। श्री वर्द्ध.स्था. जैन श्रावक संघ, जयपुर (लालभवन) के वर्षों कार्यकारिणी के सदस्य रहे। अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ व सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की गतिविधियों में आपकी विशेष रुचि व सहयोग रहा। श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ के वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में आपने अनेक क्षेत्रों में पधारकर पर्युषण सेवाएँ प्रदान कीं। मानव-सेवा संघ एवं अन्य आध्यात्मिक साहित्य में आपकी विशेष रुचि थी। हीरावत साहब के संस्कार पारिवारिक जनों में भी परिलक्षित होते हैं, जिनकी सेवाएँ आचार्यप्रवर के महाराष्ट्र विचरण में सभी ने प्रत्यक्ष देखी हैं। आपके सुपुत्र श्री राजीव जी हीरावत अनेक सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं में सेवा देने के साथ मुक्तहस्त से लक्ष्मी का सदुपयोग करते हैं।

जोधपुर- धर्मनिष्ठ, दृढ़धर्मी सुश्राविका श्रीमती कंचनदेवी जी चौपड़ा धर्मपत्नी श्री

शांतिलाल जी चौपड़ा (पुत्रवधू स्व. श्री मिश्रीमल जी चौपड़ा) का 31 अक्टूबर 2009 को 51 वर्ष की उम्र में देहावसान हो गया। आपकी आचार्य श्री हस्ती, आचार्य श्री हीरा, उपाध्याय श्री मान सहित समस्त संत-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा भक्ति थी। आप नित्य प्रति सामायिक-साधना करती थीं। आपने 21 की दीर्घ तपस्या के साथ अन्य कई छोटी-बड़ी तपस्याएँ की थीं। आप अपने पीछे एक पुत्र एवं दो पुत्रियों का भरा-पूरा परिवार छोड़ कर गई हैं।

जयपुर- श्रद्धानिष्ठ सुश्रावक श्रीमान् विनयचन्द जी ढढ्ढा का 20 अक्टूबर 2009

को स्वर्गवास हो गया। आपका जीवन कर्त्तव्यपरायणता, सेवाभावना, विनम्रता आदि गुणों से ओतप्रोत था। आपकी रत्नसंघ के प्रति अगाध श्रद्धा थी।

सवाईमाधोपुर- संघ-सेवी, संत-सेवी, श्रद्धानिष्ठ, वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री गिरधारीलाल जी जैन सुपुत्र स्व. श्री गोविन्दराय जी जैन चकेरी वाले का 76 वर्ष की उम्र में 29 अक्टूबर 2009 को सागारी संथारे के साथ समाधिमरण हो गया। आप निष्ठावान श्रावकरत्न थे। गुरु हस्ती के सामायिक-स्वाध्याय के संदेश को एक सैनिक की तरह आपने पोरवाल-पल्लीवाल के प्रत्येक क्षेत्र में प्रचारित किया। श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ के प्रचारक के रूप में आपने वर्षों तक अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं। पोरवाल-पल्लीवाल का कोई भी स्वधर्मी बन्धु उनके परिचय से अछूता नहीं था। उनकी गुरु हस्ती, हीरा, मान एवं संत-सतीवृन्द के प्रति अनन्य आस्था एवं भक्ति थी। आप नित्यप्रति 3 से 5 सामायिक करते थे। आपने आजीवन रात्रि चौविहार का त्याग एवं शीलव्रत ग्रहण किया था। आपने कई वर्षों तक पर्युषण पर्व में वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में सेवाएँ प्रदान कीं। विगत कुछ वर्षों में स्वास्थ्य अनुकूल नहीं होने के कारण आप सामायिक-स्वाध्याय की साधना में ही रत रहते थे। आप अपने पीछे दो पुत्र श्री बाबूलाल जी जैन, श्री गुलाबचन्द जी जैन, पुत्री श्रीमती हेमलता जी जैन का भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं। आपके सुपौत्र श्री जितेश जैन भी स्वाध्यायी के रूप में सेवा दे रहे हैं।

बैंगलोर- सुश्रावक श्री रणजीतकुमार जी सुपुत्र श्री अजीतराज जी मरलेचा का 31 वर्ष की लघु वय में 12 सितम्बर 2009 को आकस्मिक निधन हो गया। धर्मनिष्ठ एवं संघ-समर्पित युवारत्न ने आचार्य श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के चातुर्मास में परिवारजनों के साथ विशेष लाभ लिया।

जोधपुर- धर्मनिष्ठ एवं वयोवृद्ध सुश्रावक श्री बलवन्तराज सिंघवी पुत्र स्व. श्री हणवंतराज जी सिंघवी का 25 सितम्बर 2009 को स्वर्गवास हो गया। आपके गत पचास वर्षों से रात्रि चौविहार त्याग का नियम था। आपने पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. के जयपुर चातुर्मास में शीलव्रत के प्रत्याख्यान लिये। आप नियमित सामायिक करते थे। आप अपने पीछे पुत्र संजय सिंघवी और पुत्री श्रीमती चन्द्रसुधा मोदी व श्रीमती वीणा भंडारी का भरापूरा परिवार छोड़कर गए हैं।

जयपुर- सेवारत्न दानशील सुश्रावक श्री राजेन्द्र जी रेड सुपुत्र स्व. श्री मिश्रीमल जी

रेड का 24 अगस्त 2009 को 52 वर्ष की आयु में परलोकगमन हो गया। आप नियमित रूप से सामायिक एवं स्वाध्याय करते थे। मुक्त हस्त से दान करने की विशेष प्रवृत्ति थी। आपका संत-सती की सेवा करने का भाव रहता था। आप अपने पीछे धर्मसहायिका श्रीमती ललिता जी एवं पुत्र राहुल को छोड़कर गए हैं।

मदनगंज-किशनगढ़- श्री स्थानकवासी जैन समाज के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री चम्पालाल जी चोरडिया का 18 सितम्बर 2009 को 76 वर्ष की आयु में हृदय गति रुक जाने से आकस्मिक निधन हो गया। आपका सम्पूर्ण जीवन त्याग, संयम व समर्पण का प्रतीक था। नियमित पाँच-सात सामायिक, प्रतिक्रमण व धर्मशास्त्रों का अध्ययन करना आपके जीवन का पवित्र लक्ष्य था। आपकी सद्प्रेरणा से कई महानुभावों ने अपने आपको धर्म आराधना में समर्पित किया।

जयपुर- सरलमना धर्मप्रेमी सुश्रावक श्री रतनलाल जी बुरड (अजमेर निवासी) का

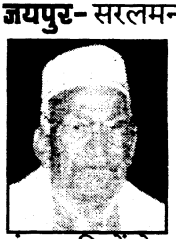

11 अक्टूबर 2009 को 85 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आपका सम्पूर्ण जीवन त्याग, संयम व समर्पण का प्रतीक था। आपका जीवन सरलता, सहिष्णुता, उदारता आदि गुणों से ओतप्रोत था। आपकी आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं सभी संत-सतियों के प्रति अटूट श्रद्धा थी। आपने आचार्य भगवन्त श्री हस्तीमल जी म.सा. के श्रीमुख से सन् 1983 में शीलव्रत ग्रहण किया था। आप अपने पीछे सुसंस्कारित भरापूरा परिवार छोड़ गये हैं।

जयपुर- श्रद्धानिष्ठ सुश्राविका श्रीमती मोहनकँवर जी भंडारी धर्मपत्नी स्व. श्री इन्दरमल जी भण्डारी का स्वर्गवास 4 अक्टूबर 2009 को हो गया। आपका जीवन सहज, सरल एवं सादगी से परिपूर्ण था। सुश्राविका नियमित रूप से सामायिक-स्वाध्याय, प्रतिक्रमण आदि धर्म-ध्यान में लगी रहती थीं, साथ ही आपने कई छोटी-बड़ी तपस्याएँ की थीं। आप देव, गुरु एवं धर्म के प्रति पूर्णतः समर्पित थीं। आप अपने पीछे पुत्र श्री तेजराज जी, सागरमल जी, भरतराज जी एवं कमलेश जी भण्डारी का भरापूरा परिवार छोड़कर गई हैं। पूज्य आचार्यप्रवर हस्तीमल जी म.सा. के निमाज संथारे के समय आपके सम्पूर्ण परिवार की महती सेवाएँ रहीं। श्री तेजराज जी भण्डारी वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में पर्युषण पर्व में सेवा प्रदान करते हैं तथा सागरमल जी ने आचार्य हस्ती के दक्षिण से जयपुर की ओर विहार में

उल्लेखनीय सेवाएँ दी थीं।

पहंना- धर्मनिष्ठ सुश्रावक श्री सोहनलाल जी हिंगड़ का 80 वर्ष की वय में 22 अक्टूबर 2009 को स्वर्गगमन हो गया। आप सरल स्वभावी, दयावान एवं गम्भीर व्यक्तित्व के धनी थे। आपकी व्रत-प्रत्याख्यानों के साथ ही सामायिक-स्वाध्याय में अच्छी रुचि थी। आपके पुत्र श्री सुरेश कुमार जी चेन्नई महानगर में श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर के प्रचारक के रूप में कार्यरत हैं। विगत कई वर्षों से श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ में वरिष्ठ स्वाध्यायी के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान कर रहे हैं। आपकी सुपुत्री प्रवर्तिनी श्री यशकंवरजी म.सा. की सुशिष्या श्री सुप्रभा जी म.सा. के रूप में जिनशासन की प्रभावना कर रही हैं।

चेन्नई- धर्मपरायण सुश्राविका श्रीमती फूलीबाई जी छाजेड़ धर्मपत्नी स्व. श्री प्रेमराज जी छाजेड़ का 81 वर्ष की वय में संथारे सहित 19 अक्टूबर 2009 को समाधिमरण हो गया। आपने तत्र विराजित श्री वीरेन्द्रमुनि जी म.सा. के मुखारविन्द से संथारे के प्रत्याख्यान ग्रहण किये। आप नित्य रात्रि-चौविहार, 14 नियम एवं बारह व्रतों का पालन करती थीं। आपके सुपुत्र श्री अमरचन्द जी छाजेड़ गत 25 वर्षों से स्वाध्यायी के रूप में सेवा दे रहे हैं।

जलगाँव- श्री केवलचन्द जी ललवाणी का 78 वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया। श्री ललवाणी जी का जलगाँव व खानदेश में सामाजिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर विशेष स्थान था। आप देव, गुरु, धर्म के प्रति समर्पित थे। आपने पिछले लगभग 50 वर्षों से मिठाई का त्याग, जमीकन्द का त्याग तथा रात्रि-भोजन का त्याग कर रखा था। ब्रह्मचर्य की पालना का व्रत भी आपने ले रखा था।

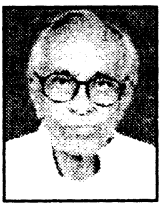

चेन्नई- धर्मनिष्ठ सुश्राविका श्रीमती सोहनकंवर जी भण्डारी धर्मपत्नी श्री तनसुखचन्द जी भण्डारी (लवेरा बावड़ी) का 71 वर्ष की उम्र में 14 जून 2009 को स्वर्गवास हो गया। आप सरलस्वभावी, मिलनसार एवं दृढ़धर्मी श्राविका थीं। आपने अपने जीवनकाल में अनेक तपस्याएँ कीं तथा आप नित्य सामायिक एवं अनेक नियमों का पालन करती थीं। आपकी गुरु हस्ती, हीरा, मान के प्रति अटूट आस्था एवं श्रद्धाभक्ति थी। आपने चिन्ताधरी पेठ महिला मण्डल के अध्यक्ष पद को वर्षों तक शोभित किया।

जोधपुर- संघसेवी सुश्राविका श्रीमती पानकंवर जी कुम्भट धर्मपत्नी श्री भंवरलाल

जी कुम्भट का 30 अक्टूबर 2009 को देहावसान हो गया। आपकी परमश्रद्धेय आचार्य श्री हस्ती, आचार्य श्री हीरा, उपाध्याय श्री मान सहित संत-सतीवृन्द के प्रति अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आप व आपका सम्पूर्ण परिवार संघ-सेवा, संत-सतीवृन्द की सेवा के साथ-साथ धर्माराधना में सदैव तत्पर है। आपने कई व्रत-प्रत्याख्यान ग्रहण किये थे तथा उनकी परिपालना में सदैव तत्पर रहती थीं। संघ द्वारा आयोजित सभी कार्यक्रमों में आपकी सक्रिय भागीदारी रहती थी। आप अपने पीछे चार सुपुत्रों का भरापूरा संस्कारित परिवार छोड़कर गई हैं।

जयपुर- श्रद्धानिष्ठ श्रावकरत्न श्री अरूणकुमार जी सुपुत्र स्व. श्री महताबचन्द जी नवलखा का 21 अक्टूबर 2009 को देहावसान हो गया। आपके जीवन पर आचार्यप्रवर, उपाध्यायप्रवर एवं संत-सतीवृन्द का विशेष प्रभाव था।

जोधपुर- सुश्रावक श्री गिरधारीलाल जी मोहनोत सुपुत्र स्व. श्री छगनराज जी

मोहनोत (सुपौत्र स्व. श्री सोहनराज जी मोहनोत) का स्वर्गवास लम्बी बीमारी के पश्चात् 29 अक्टूबर 2009 को हो गया। आप सरल स्वभावी, धर्मनिष्ठ एवं सबको सहयोग करने वाले श्रावक थे। रत्नसंघ में दीक्षित स्व. श्री मगनमुनि जी म.सा. के आप सांसारिक भतीजे थे।

बेलगांव- श्रद्धानिष्ठ संघ-सेवी सुश्रावक श्री मांगीलाल जी सामसुखा (मोगड़ा वाले) का 15.10.09 को देहावसान हो गया। चतुर्विध संघ-सेवा का लाभ लेने हेतु सदैव तत्पर रहने वाले श्रावकरत्न श्री सामसुखा का जीवन सरलता, सहिष्णुता एवं उदारता आदि गुणों से पूरित था। विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म.सा. आदि ठाणा के चातुर्मास में चतुर्विध संघ-सेवा तथा परमश्रद्धेय आचार्यप्रवर के विचरण-विहार में आप द्वारा समर्पित सेवाएँ प्रदान की गईं। श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पाली के विविध कार्यक्रमों में भी आपके परिवार का सहयोग रहता है।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

11000/- जिनवाणी की स्तम्भ-सदस्यता हेतु प्रत्येक

197 श्री पारसचन्द जी हीरावत, पंचरत्ना बिल्डिंग, ऑपेरा हाउस, मुम्बई

3000/- साहित्य की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

692 श्री दिनेश कुमार जी जैन, कटरा घुलिया, चाँदनी चौक, दिल्ली

500/- जिनवाणी पत्रिका की आजीवन-सदस्यता हेतु प्रत्येक

12270 श्री धनपत लाल जी बोहरा, डॉ. राधाकृष्ण नगर, भीलवाड़ा (राजस्थान)
12271 Shri Ashok Raj ji Singhvi, Panrti (Tamilnadu)
12272 Shri Shanti ji Chopra, Arsikere, Hassan (Karnataka)
12273 श्रीमती संतोष जी सिंघवी, पोकरण हाउस, जे.डी.ए. के पास, जोधपुर (राजस्थान)
12274 Smt. N. Chanchal Bai ji, Bangalore (Karnataka)
12275 Shri J. Suresh Kumar ji, Bandipalya, Mysore (K.T.)
12276 श्री प्रकाश जी भंडारी, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर (राजस्थान)
12277 श्री मनोज जी ओस्तवाल, द्वितीय मंजिल, सपना-संगीता रोड, इन्दौर (मध्यप्रदेश)
12278 श्री मनोज कुमार जी जैन, मोटी खावड़ी, जामनगर (गुजरात)
12279 Shri Sanjay ji Singhvi, Bangalore (Karnataka)
12280 Smt. Lilawati ji Sankhlecha, Sainthia, Veerbhoom (W.B.)
12281 Shri Munnalal ji Abad, Raichur (Karnataka)
12282 श्री गौतम कुमार जी लोढ़ा, अरिहंत भवन, बजाज खाना, कोटा (राजस्थान)
12283 श्री अभय कुमार जी चौहान, सुखदेव नगर, इन्दौर (मध्यप्रदेश)
12284 श्री कमल कुमार जी भंडारी, अम्बिका नगर के सामने, डिसा, बनासकांठा (गुजरात)
12285 Shri J. K. Jain Ji, Ramdarpeth, Nagpur (M.H.)
12286 डॉ. अभय कुमार जी तातेड़, महावीर नगर-प्रथम, टोंक रोड़, जयपुर (राज.)
12287 श्री तेजपाल जी कांठेड, डी-381, आजाद नगर, भीलवाड़ा (राजस्थान)
12289 श्री नीलेश जी लोढ़ा, पीतल कारखाने के ऊपर, रतलाम (मध्यप्रदेश)
12290 श्री देवेन्द्र कुमार जी नागोता (सोलंकी), ढाल की पोल, चकला, अहमदाबाद (गुजरात)
12291 श्री कुन्दन जी लुणावत, पूना-बोम्बे रोड़, वाकडेवाडी, शिवाजीनगर, पूना (महाराष्ट्र)
12293 श्री अमरचन्द जी कोचर, खैरी, तालुका-रालेगाँव, जिला-यवतमाल (महाराष्ट्र)
12294 श्री लुणचंद जी बाँठिया, सुखधाम सोसायटी, साबरमती, अहमदाबाद (गुजरात)
12295 Shri Vardhman Swetamber Sthanakvasi Jain Shravak Sangh (Regd.), Smt. Bhikhibai Poonam chand ji Lunawat Jain Sthanak, Bangalore (Karnataka)

500/- श्री डी. बोहरा परिवार, चेन्नई के सौजन्य से

12288 श्री अविनाश कुमार जी जोशी, महाराजा कॉलोनी, ढेर का बालाजी, जयपुर (राज.)

12292 Shri Dungar Chand ji Surana, Chennai (Tamilnadu)

जिनवाणी हेतु साभार प्राप्त

7000/- श्रीमती गौतमचन्द जी भंडारी (निमाज वाले) यशवंतपुर-बैंगलोर, पूज्य पिताश्री स्व. श्री गणेशमल जी भंडारी की पुण्य स्मृति में, पूज्य आचार्य भगवन्त श्री, उपाध्यायप्रवर श्री, साध्वी प्रमुखा सहित सन्त-सतीवृन्द के कुटुम्बी एवं सम्बन्धी जनों के साथ दर्शनलाभ उपरान्त, पूज्य आचार्यश्री के श्रीमुख से मांगलिक श्रवण के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

5100/- श्री ज्ञानचन्द जी मुणोत, हुबली, मास खमण की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री अमरचन्द जी, कमल किशोर जी, आनन्द जी, भरत जी, राजेन्द्र जी बोहरा, पीपाड़शहर-जोधपुर, सौ. विमला देवी जी धर्मपत्नी श्री किशोर जी बोहरा के 10 की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

2100/- श्री शांतिलाल जी गौरव जी चौपड़ा, जोधपुर, श्रीमती कंचनदेवी जी चौपड़ा धर्मपत्नी श्री शांतिलाल जी चौपड़ा (पुत्रवधू स्व. श्री मिश्रीलाल जी चौपड़ा), का दि. 31.10.09 को देहावसान हो जाने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

1100/- श्री धनरूपमल जी हीरावत, जयपुर, अपनी पुत्रवधू श्री बोबी बाबू जी की धर्मपत्नी श्रीमती हेमलता जी हीरावत के अठाई की तपस्या सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री सुरेन्द्रराज जी, अजीत कुमार जी मर्लेचा, बैंगलोर सप्रेम भेंट।

1100/- श्रीमती शांतादेवी जी धर्मपत्नी स्व. कुशलचन्द जी नाहर, जयपुर, सुपुत्र श्री प्रवीण जी-श्रीमती शिखा जी नाहर के पुत्र रत्न की प्राप्ति के उपलक्ष्य में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री संजय जी सिंघवी, जोधपुर, पूज्य पिताजी श्री बलवंतराज जी सिंघवी के दि. 25.9.09 को देहावसान हो जाने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

1100/- श्री केवलचन्द जी विजयकुमार जी गोलेछा, जोधपुर, श्रीमती लूणीदेवी धर्मपत्नी श्री केवलचन्द जी के 8 उपवास, श्रीमती शांतिदेवी धर्मपत्नी स्व. श्री ताराचन्द जी के 8 उपवास, श्रीमती नीता धर्मपत्नी श्री विजयराज जी के मासखमण, श्रीमती हेमलता धर्मपत्नी श्री सुरेश जी के 15 उपवास तथा श्रीमती सुधा धर्मपत्नी श्री अमित जी गुलेच्छा के 11 उपवास की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

1100/- श्री शांतिलाल जी मेघराज जी जैन (चौरू वाले), जयपुर, आचार्य भगवन्त तथा उपाध्याय भगवन्त के दर्शन एवं पूज्य श्री यशवन्तमुनि जी म.सा. के 9वें दीक्षा-दिवस के उपलक्ष्य में भेंट।

1000/- श्रीमती प्रभा जी अजीतराज जी कांकरिया (भोपालगढ़ वाले), मेड़ता सिटी,

अपनी माताजी सुश्राविका श्रीमती गुठिया बाई जी की प्रथम पुण्य तिथि एवं विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 के दर्शन करने के उपलक्ष्य में।

501/- श्री प्रकाशचन्द जी बुरड़, जयपुर, पूज्य पिता श्री रतनलाल जी बुरड़ (अजमेर वाले) का दिनांक 11.10.2009 को 85 वर्ष की आयु में स्वर्गवास होने पर उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

500/- श्री सुरेशकुमार जी हिंगड़, पहुंना, जिला- चित्तौड़गढ़, पूज्य पिताजी श्री सोहनलाल जी हिंगड़ का दि. 22.10.09 को देहावसान हो जाने पर उनकी पावन स्मृति में भेंट।

500/- श्रीमती सुनीता अमरचन्द जी मेहता, मुम्बई, विदुषी महासती श्री सौभाग्यवती जी म.सा. आदि ठाणा 4 के दर्शनार्थ, पूज्या महासती श्री सुश्रीप्रभा जी म.सा., महासती श्री शारदा जी म.सा. के जन्म-दिवस एवं महासती श्री सुश्रीप्रभा जी म.सा. की रजत दीक्षा जयन्ती के उपलक्ष्य में।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल से प्रकाशित साहित्य हेतु साभार प्राप्त

25000/- श्रीमान् पी. एस. सुराणा जी अध्यक्ष-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल, चेन्नई, मंडल से प्रकाशित पुस्तक 25 बोल सार्थ विवेचन सहित के पुनः मुद्रण हेतु सप्रेम भेंट।

जीवदया हेतु साभार प्राप्त

500/- श्रीमती कान्ता जी मेहता (जोधपुर वाले), अहमदाबाद, स्वर्गीय श्री प्रकाशचन्द जी मेहता की 24वीं पुण्य तिथि की स्मृति में सप्रेम भेंट।

500/- श्री कमला पल्लीवाल जैन स्थानक, गंगापुरसिटी-सवाईमाधोपुर सप्रेम भेंट।

500/- श्री जीवराज जी, गौतमचंद जी, उमंग जी सुराणा, जयपुर सप्रेम भेंट।

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर हेतु साभार प्राप्त

10000/- श्रीमती अमृतकंवर कल्याणमल चोरडिया ट्रस्ट, चेन्नई, श्रीमती मीना कंवर धर्मपत्नी श्री पी.एम. चोरडिया को स्तम्भ सदस्य बनाने हेतु।

5000/- श्री जम्बूकुमार जी ललवाणी, चैंगम।

स्वाध्याय संघ को प्राप्त पर्युषण सहायता

रुपये	स्थान	रुपये	स्थान
1750	बुरहानपुर	1100	फगवाड़ा
550	मोही	500	आजादनगर, भीलवाड़ा

चेन्नई शाखा को प्राप्त पर्युषण सहायता

रुपये	स्थान	रुपये	स्थान
8001	पल्लीपेट	5111	आरकाट
5000	मिरसाहिबपेठ	3100	नुगम्बाक्कम
3100	चेटपेट	3100	श्रीकालाहस्ती
2100	कालाडीपेट	2100	चुल्लैमेडू

2100	एमएमडीए कॉलोनी	2100	एमकेबी नगर
2000	कलाकुरची	1600	पुत्तुर
1501	नेल्लीकुप्पम	1100	बालुचेट्टीछत्रम
1100	चित्तुर	1100	पेरम्बाक्कम

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

300000/- श्री मोफतराज जी पी. मुणोत, मैसर्स मुणोत फाउण्डेशन, मुम्बई

60000/- श्रीमती कमलादेवी दुलीचन्द जी बाघमार, चेन्नई, 60 वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में।

60000/- श्रीमती विजयकंवर धर्मपत्नी स्व. श्री सोहनलाल जी नाहर, सूरत, श्री रवि जी नाहर पुत्र श्री निहाल जी नाहर एवं श्री राहुल जी नाहर पुत्र श्री सुनील कुमार जी नाहर के यू.के. में एम.बी.ए. उत्तीर्ण करने के उपलक्ष्य में।

24000/- श्री प्रकाशजी, पंकज जी, विशाल जी, किंशु जी जैन, जलगाँव।

24000/- श्री कनकमल जी, कुशलचन्द जी, पदमचन्द जी, महावीरचन्द जी कोठारी, निमाज, 28 अप्रेल 09 को पीपाड़ सिटी में जितेन्द्र जी कोठारी की दीक्षा के उपलक्ष्य में।

24000/- श्री हस्तीमल जी, महेन्द्र जी, बुधमल जी, जितेन्द्र कुमार जी सालेचा बोहरा, पीपाड़ सिटी, चेन्नई, 28 अप्रेल 09 को पीपाड़ सिटी में श्रीमती एवं श्री दुलीचन्द जी बोहरा की दीक्षा के उपलक्ष्य में।

12000/- श्री सोहनलाल जी महावीरचन्द जी बोथरा, एग्रो इण्डस्ट्रीज प्रा.लि., जलगाँव।

12000/- श्री विक्रम जी बाघमार, चेन्नई।

12000/- श्री सौभागमल जी धर्मचन्द जी जैन, कुशतला, सवाईमाधोपुर।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य श्री हस्ती स्कॉलर शिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- *श्री अशोक जी कवाड़*, 33, *Montieth Road, Egmore, Chennai-600008 (Mob. 9381041097)*

आगामी पर्व

मार्गशीर्ष कृष्णा 14	रविवार,	15.11.2009	चतुर्दशी
मार्गशीर्ष कृष्णा 30	सोमवार,	16.11.2009	पक्खी,
मार्गशीर्ष शुक्ला 8	बुधवार,	25.11.2009	अष्टमी
मार्गशीर्ष शुक्ला 14	मंगलवार,	01.12.2009	चतुर्दशी, पक्खी
पौष कृष्णा 8	बुधवार,	09.12.2009	अष्टमी

जयगुरु हस्ती . जयगुरु हीरा जयगुरु मान

अनूठा दान छात्रवृत्ति का
जीवन बनता एक विद्यार्थी का

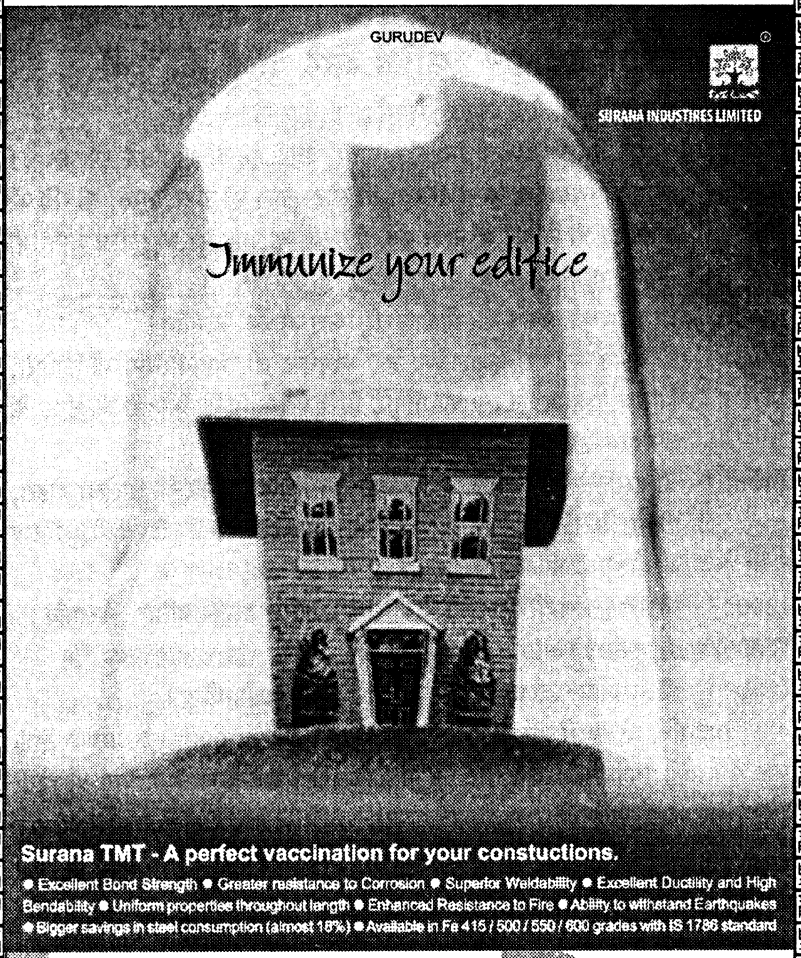

Surana TMT - A perfect vaccination for your constuctions.

● Excellent Bond Strength ● Greater resistance to Corrosion ● Superior Weldability ● Excellent Ductility and High Bendability ● Uniform properties throughout length ● Enhanced Resistance to Fire ● Ability to withstand Earthquakes ● Bigger savings in steel consumption (almost 18%) ● Available in Fe 415 / 500 / 550 / 600 grades with IS 1786 standard

For marketing enquiries, contact : 91-44-2855 0715 / 2855 0736

Corporate Head Office :
29, Whites Road, Second Floor Royapettah, Chennai - 600 014.
Phone : 91-44-2852 5127 (3 Lines) / 2852 5596 Fax : 91-44-2852 0713
E-mail : steelmktg@surana.org.in / silimited@surana.org.in
Website : www.surana.org.in

IS:1786

SURANA™
yes, the best TMT RE BARS

Surana TMT - *Lifeline of every Construction...*

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

देने वाले निरभिमानी, पाने वाले हैं आभारी।
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति में, ज्ञानदान की महिमा न्यारी।।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

With Best Compliments From :

पारसमल सुरेशचन्द कोठारी

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

प्रतिष्ठान

KOTHARI FINANCERS

23, Vada malai Street, Sowcarpet
Chennai-600079 (T.N.) Ph. 044-25292727
M. 9841091508

BRANCHES :

Bhagawan Motors
Chennai-53, Ph. 26251960

❖❖❖

Bhagawan Cars
Chennai-53, Ph. 26243455/56

❖❖❖

Balalji Motors
Chennai-50, Ph. 26247077

❖❖❖

Padmavati Motors
Jafar Khan Peth, Chennai, Ph. 24854526

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

प्यास बुझाये, कर्म कटाये फिर क्यों न अपनायें धोवन पानी

Narendra Hirawat & Co.

Flat No. 1, Building No. 2, Navjeevan Society,
Senapati Bapat Marg, Matunga (West), MUMBAI-400 016

Trin-Trin

Matunga Office : 022-24370713, 24380713, 66669707
Opera House Office : 022-23669818
Mobile : 09821040899

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

छोटा सा नियम धोवन का।
लाभ बड़ा इसके पालन का।।

GURU HASTI GOLD PALACE

(Govt. Authorised Jewellers) (916. KDM)

22 Ct. Gold ! 24 Ct. Trust !

No. 4 Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 044-26272609, 55666555, 26272906, 55689588

Guru Hasti Bankers :

P. MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD

N0. 5, Car Street,
Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. 26272906, 55689588

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

ज्ञान का एक दीया जलाइये
सहयोग के लिए आगे आइए
आचार्य हस्ती छात्रवृत्ति योजना का
लाभ उठाकर आनन्द पाईये

आदरणीय रत्न बन्धुवर

छात्रवृत्ति योजना में एक छात्र के लिए Rs. 12,000 के गुणक में दान राशि "Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund" योजना के नाम चैक/बैंक ड्राफ्ट (Donations to Gajendra Nidhi are Exempt u/s 80G of income Tax Act, 1961) से निम्नांकित पते पर भेंजे, पुण्यधन कमाइऐं।

Ashok Kavad
PRITHVI EXCHANGE
33, Montieth Road, Egmore, CHENNAI-600008
Tele Fax 044-43434249, 09381041097

JAI GURU HASTI JAI GURU HEERA JAI GURU MAAN

प्यास बुझाये, कर्म कटाये फिर क्यों न अपनायें धोवन पानी

With best compliments from :

SOHANLAL UMEDRAJ SURENDER HUNDIWAL

S.UMEDRAJ JAIN (HUNDIWAL)

098407 18382

2027 'H' BLOCK 4th STREET,12TH MAIN ROAD,
ANNA NAGAR, CHENNAI-600040
044-32550532

BRANCHES

APPOLO BRIGHT STEELS PVT LTD.
S.P.59, 3 rd MAINROAD
AMBATTUR ESTATE CHENNAI-600058
044-26258734, 9840716053, 98407 16056
FAX: 044-26257269
E-MAIL: appolobright@yahoo.com

APPOLO CORRUGATORS PVT LTD.
NO.400 NORTH PHASE, SIDCO INDUSTRIAL ESTATE,
AMBATTUR CHENNAI-60098
FAX: 044-26253903, 9840716054
E-MAIL:appolocorrugators@yahoo.com

SAPNA PACKAGING INDUSTRIES
NO.410 NORTH PHASE INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR, CHENNAI-600098
044-26241041

PENINSULAR PACKAGINGS
NO.25 SIDCO INDUSTRIAL ESTATE
AMBATTUR CHENNAI-600098
044-26250564

आर.एन.आई. नं. 3653/57
डाक पंजीयन संख्या RJ/JPC/M-07/2009-11
वर्ष : 66 ★ अंक : 11 ★ मूल्य : 10 रु.
10 नवम्बर, 2009 ★ मार्गशीर्ष 2066

धोवन पानी - निर्दोष जिन्दगानी

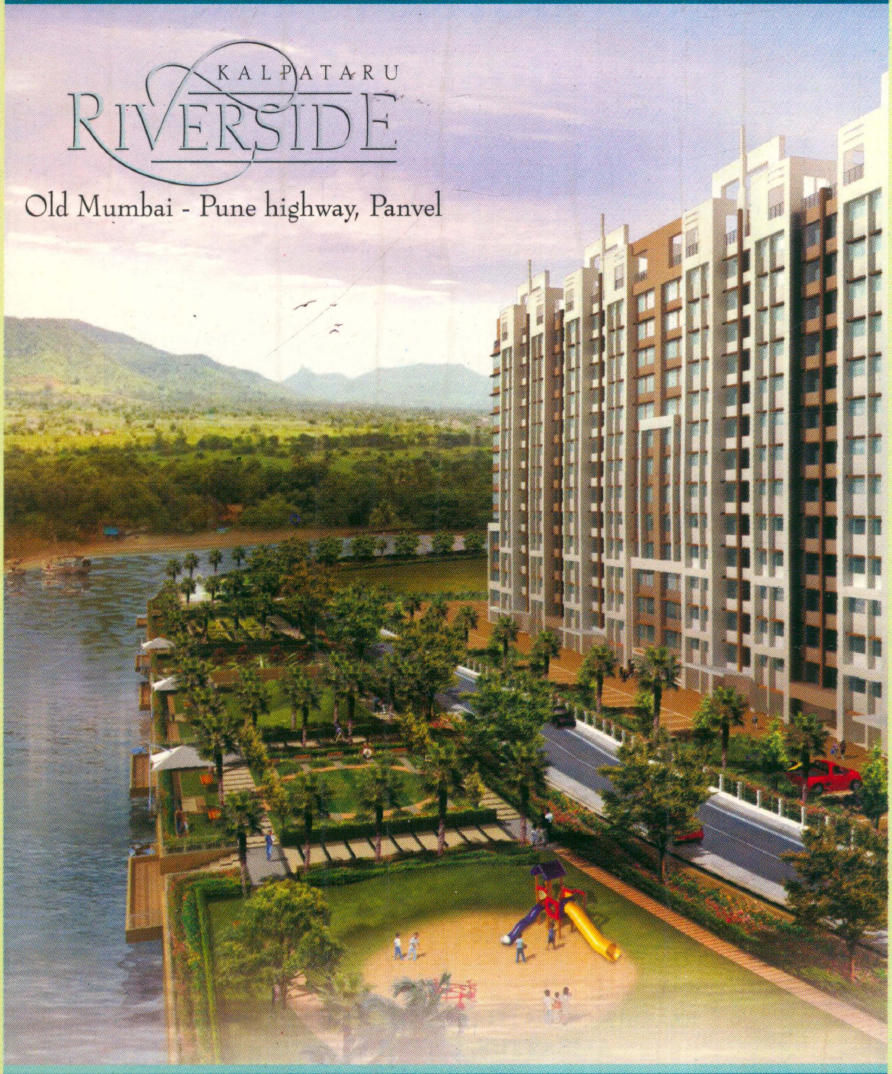

KALPA-TARU®

101, Kalpataru Synergy, Opp. Grand Hyatt, Santacruz (East),
Mumbai - 400 055. ● Tel.: 3064 3065, 98339 45470 ● Fax: 3064 3131
Website: www.kalpataru.com

स्वामी-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिये मुद्रक संजय मित्तल द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, एम.एस.बी. का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशक प्रेमचन्द जैन, बापू बाजार, जयपुर से प्रकाशित। सम्पादक डॉ. धर्मचन्द जैन।